

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182448

UNIVERSAL
LIBRARY

नं० ५ कबीरसागर ।

मू० १।) चतुर्थखण्डांतर्गत ।

बोधसागर-द्वितीय भाग,

भोपालबोध, जगजीवनबोध, गरुडबोध,
हनुमानबोध तथा लक्ष्मणबोधसंयुक्त

पृ० ५१८ से ६७१ तक.



कबीरसागर चतुर्थ खण्डान्तर्गत -
बोधसागर ।

द्वितीय भाग ।

जिसमें

भोपालबोध, जगजीवनबोध,
गरुडबोध, हनुमानबोध
तथा

लक्ष्मणबोध संयुक्त है ।

भारतपथिक कबीरपंथी-
स्वामी श्रीयुगलानन्द(विहारी)द्वारा संशोधित.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
अध्यक्ष-“श्रीवेंकटेश्वर” स्टीम-प्रेस,
बम्बई.

संवत् १९९३ शके १८५८.



मुद्रक और प्रकाशक-

सैमराज श्रीकृष्णदास,

मालिक-“श्रीवेङ्कटेश्वर” स्टीम प्रेस, बम्बई.

पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार “श्रीवेङ्कटेश्वर” यन्त्रालयाव्यक्षाधीन है।



कबीरपंथके प्रधान आचार्य,



श्री १०८ पं० श्री उग्रनाम साहब.

बोधसागर द्वितीय भागकी अनुक्रमणिका ।



इसमें चौथे तरंगसे लेकर आठवें तरंग तक है, जिसमें—

चौथे तरंगमें भोपालबोध है जो पृष्ठ १ से आरंभ होकर पृष्ठ १६ पर समाप्त हुआ है ।

पांचवा तरंग जगजीवन बोध है जो पृष्ठ १७ से आरंभ होकर ६० पर समाप्त हुआ है ।

छठा तरंग गरुडबोध है जो पृष्ठ ६१ से आरंभ होकर पृष्ठ १०८ पर समाप्त हुआ है ।

सातवां तरंग हनुमानबोध है जो पृष्ठ १०९ से आरंभ होकर पृष्ठ १३६ पर समाप्त हुआ है ।

आठवां तरंग लक्ष्मणबोध है जो पृष्ठ १३७ से आरंभ होकर पृष्ठ १६० पर समाप्त हुआ है ।

उपरोक्त तरङ्गोंकी अलग अलग अनुक्रमणिका इस प्रकार है—

अथ भोपालबोधकी अनुक्रमणिका ।

विषय.	पृष्ठांक.
धर्मदास साहबका सद्गुरुसे कालके जीवोंके मारनेके विषयमें प्रश्न करना और कबीर साहबका उत्तर ।	५
धर्मरायका मृत्युको मनुष्योंके मारनेकी आज्ञा देना ।	५
सत्य पुरुषका कबीर साहबको जीवोंकी रक्षाके लिये पृथ्वी पर आनेकी आज्ञा देना ।	”
कबीर साहबका जालंधर देशमें राय भोपालके घर जाना ।	६
राय भोपालका कबीर साहबको काल करनेकी सलाह करना ।	७
राजाके अधीन होकर सद्गुरुका हाल पूछना ।	८
रानीका सद्गुरुके अधीन होना ।	९
कबीर साहबका राजारानीको ज्ञान समझाना ।	”

विषय.	पृष्ठांक.
राजाका आरती चौका करके नामका उपदेश लेना ।	११
राजाको लेकर कबीर साहबका सत्य-लोकको जाना ।	१२
मंत्रि आदिका राजाको महलमें न देखकर पश्चात्ताप और शोक करके भयसे नगर छोड़कर भाग जाना	१५
इति ।	

अथ जगजीवनबोधकी अनु- क्रमणिका ।

धर्मदास साहबका गर्भविषयक प्रश्न और सद्गुरुका उत्तर ।	२१
गर्भोत्पत्ति वर्णन ।	२२
जगजीवनका गर्भके कष्टसे ब्याकुल होकर साहबकी स्तुति और कौल करना ।	२३

विषय.	पृष्ठांक.	विषय.	पृष्ठांक.
साहबका दया करके जगजीवनसे कौल लेकर गर्भसे मुक्त करना ।	२५	पान माहात्म्य ।	४७
पिशुन कर्म वर्णन ।	२६	काल ज्ञान ।	"
पिशुनके फेरमें पड़कर जगजीवनका गर्भका कौल भूल जाना और संसारी वैभवमें मगन होना ।	२९	सद्गुरुका पाठनसे चलनेका विचार प्रकट करना और वहाँके हंसोंकी विन्ती ।	४८
सद्गुरुका पाठनमें पहुँचना और एक सूखे बागमें ठहरना, उसका हरा होजाना और राजाका खबर पाकर बाग देखने आना फिर कवीर साहबसे मिलना ।	३२	सद्गुरुका राजाको अपना प्रतिनिधि बनाकर गमन करना ।	४९
सद्गुरुका राजाको गर्भका कौल याद दिलाना ।	३४	राजाका सत्यलोक गमनकी तय्यारी करना और अधिकारी हंसोंका साथ जाना ।	५०
राजाका सद्गुरुसे उद्धारकी विन्ती करना ।	३५	सत्य लोकके मार्गमें धर्मरायसे हंसोंकी वार्तालाप ।	५१
सद्गुरुका राजाको आरती करनेका उपदेश देना ।	३०	कामिनीसे बातचीत ।	५२
राजाका पहलेके हंसोंका हाल पूछना और सद्गुरुका उत्तर देना ।	३७	हंस सुजन जनसे बातचीत ।	५३
राजा रानी इत्यादि सब परिवारका सद्गुरुकी शरणमें आना और राजकुँवरका हठ करना पीछे शरणमें आना ।	३९	सब हंसोंको लेकर ज्ञानीजीका सत्य पुरुषके सन्मुख जाना और सत्य पुरुषकी प्रसन्नता ।	५४
कुकर्मी जीवके उद्धारका उपाय ।	४०	ग्रन्थसार ।	५६
सत्यलोकके आनेका मार्ग ।	"	इति ।	
आरती कराकर राजा तथा अन्य जीवोंका पान लेना ।	४३	अथ गरुडबोधकी अनुक्रमणिका ।	
तन छूटने पर हंसका स्थान । कर्मानुसार भिन्न २ लोककी प्राप्ति ।	४४	सत्यपुरुषका ज्ञानीजीको संसारमें जाकर जीवोंको चितानेकी आज्ञा देना ।	६५
राजाका सद्गुरुसे लोक लेजानेकी विन्ती करना ।	४५	ज्ञानीजीका संसारमें आना और गरुडसे भेंट होना ।	६६
सद्गुरुका प्रसाद पाना ।	४६	गरुडका श्रीकृष्णके पास जाकर ज्ञान करना ।	६७
		गरुडका ज्ञानीजीके आधीन होना ।	६८
		श्रीकृष्णका गरुडको कवीर साहबको गुरु बनानेकी आज्ञा देना ।	७०
		गरुडका आरतीका साज इकट्ठा करना ।	७१
		गरुडका सब देवोंको आरतीमें बुलानेके लिये नेवता देनेको ब्रह्मसभामें जामा ।	"

विषय.	पृष्ठांक.
महादेवका बोध करना और गरुडका	
उन्हें समझाना ।	७२
गरुडकी आरतीमें सब देवोंका आना	
और गरुडका परवाना लेना ।	७३
गरुडका त्रिदेवसे चर्चा करने जाना	७४
गरुड और ब्रह्मासे चर्चा	"
ब्रह्माका विमान भेजकर विष्णु और महा-	
देवको बुलाना ।	७७
ब्रह्मा और विष्णुकी बातचीत ।	७९
गरुड और महादेवका वार्तालाप ।	८१
तीनों देवोंका गरुडसे हारकर मातासे	
भेद पूछनेको जाना ।	८३
निर्गुण भेद वर्णन ।	८६
लौकिक ज्ञान वर्णन ।	८७
महादेवका क्रोध और गरुडका ज्ञान	८८
गरुडका तीनों देवोंकी परीक्षा लेनेके लिये	
बालक लाना ।	८९
बालकका कालसे रक्षाके लिये त्रिदेवसे	
विन्ती करना ।	९०
तीनों देवका कालसे रक्षा करनेमें असमर्थ	
होना और गरुडका बालकको जिलाने	
की प्रतिज्ञा करना ।	९३
गरुडका लोक लोकान्तरमें अमृतके लिये	
फिरना और सब लोकपालोंसे चर्चा	
करना ।	९६
गरुडका अमृत लाकर बालकको जिलाना	
और तीनों देवका हार मानना ।	१०४
गरुड बोधका संक्षेपसार	१०५
इति ।	
अथ हनुमान बोधकी अनु-	
क्रमणिका ।	
धर्मदास साहबका प्रश्न ।	११३
हनुमान शब्दका अर्थ और हनुमान बोध	
का भाव (टीप्पणीमें)	"
त्रेतामें कबीर साहबका हनुमानसे मिलना	११४

विषय.	पृष्ठांक.
हनुमानका अपनी बड़ाई करना । और	
मुनीन्द्रजीका समझाना ।	११५
हनुमानका रामचन्द्रजीको सबके ऊपर	
थापना (रामनामकी बड़ाई)	११६
मुनीन्द्रजीका हनुमानके वचनका खण्डन	
कर देना ।	११७
हनुमानका निरंजन (काल) की बड़ाई	
करना ।	११९
मुनीन्द्रजीका समर्थकी बड़ाई करना और	
हनुमानका सन्देशमें आकर समर्थकी	
बात पूछना मुनीन्द्रजीका समर्थकी	
बात कहना ।	१२१
हनुमानका मुनीन्द्रजीसे समर्थके देशमें	
लेजानेपर उसको देख लेनेपर	
विश्वास करनेकी बात कहना ।	१२३
मुनीन्द्रजीका लोप होजाना और हनुमा-	
नका घबराकर पुकारना, फिर मुनी-	
न्द्रजीका प्रकट होना ।	"
हनुमानका मुनीन्द्रजीसे अपनेको शिष्य	
कर लेनेकी प्रार्थना करना ।	१२४
मुनीन्द्रजीका योगजीत नामसे प्रकट	
होकर आदि उत्पत्तिकी कथा ; हनुमा-	
नको सुनाना ।	"
हनुमानका साधु लक्षण विषय मुनीन्द्र-	
जीसे प्रश्न करना और नाना वेष तथा	
योग युक्तिका वर्णन करना ।	१२५
साधुलक्षण (मुनीन्द्रवचन)	१२६
हनुमानका समर्थका ठिकाना और वहां	
पहुँचनेकी युक्ति पूछना ।	१२७
मुनीन्द्रजीका सुरति निरति एक करना	
समर्थके घर पहुँचनेका मार्ग बताना	"
हनुमानका सुरति निरति एक करनेकी	
युक्ति पूछना ।	"
मुनीन्द्रजीका समर्थके घर पहुँचनेके	
लिये सुरति निरति एक करनेकी युक्ति	
हनुमान को बताना ।	१२८

विषय.	पृष्ठ.
हनुमानका कवीर साहबका उपकार मानना	१३१
ग्रन्थकी समाप्ति कवीरका वचन धरमदास प्रति ।	१३२
सारविचार पचीसी ।	१३३
इति ।	
अथ लक्ष्मण बोधकी अनुक्रमणिका ।	
मंगलाचरण और उत्थानिका ।	१४१
कृष्णजीका शरीर त्याग देना, बलभद्रजीका सन्देह और कृष्णका समझाना । "	
बलभद्रजीका कृष्णके शवका दाहकरके समुद्रमें बहा देना और कृष्णजीका उडीसाके राजाको स्वप्न देना ।	१४२
राजाका समुद्रमें स्नानको जाना और कृष्णके शवको पाकर स्वप्नको सच्चा समझकर जगन्नाथका मन्दिर बनवाना	१४३
समुद्रका अपना बदला लेनेके लिये मंदिरको छः बार बहा लेजाना । "	
सातवें बार कबीर साहबका समुद्र तटपर बैठना और समुद्रका पीछे लौट जाना "	
लक्ष्मी और कबीर साहबकी वार्तालाप	१४४
समुद्र और कबीर साहबकी बातचीत ।	१४६
ध्रुवयुगकी वार्ता (लक्ष्मणबोध)	१४८
समुद्रका द्वारिका डुबा लेना और कबीर साहबका जगन्नाथके यज्ञमें जाना ।	
पण्डाका सन्देह और अनंत कवीरका दर्शन तथा जगन्नाथमें छूत छात	

विषय.	पृष्ठ.
माननेवालेके दंडका वर्णन ।	१४९
ब्राह्मणका समुद्र तटपर स्नान करने जाना वहां कबीर साहबको देखकर घृणा करना । उसके देहमें कोठ फूटना ।	
राजाका कबीर साहबसे प्रार्थना करके ब्राह्मणका शरीर अच्छा कराना	१५०
जगन्नाथजीका काष्ठकी प्रतिमा बनानेके लिये राजाको स्वप्न देना ।	१५१
राजाका मलयागिरिसे चन्दन लाना और मूर्ति बनानेके लिये कारीगरका खोजना और कारीगर न मिलनेसे राजाका विकल होना । "	
कबीर साहबका निरंजके अनुरोधसे कारीगरका रूप धरके राजाके द्वार पर जाना और सोलह दिनतक द्वार न खोलनेका वचन लेकर प्रतिमा बनानेको बैठना ।	१५३
कबीर साहबका निरंजनके अनुरोधसे कारीगरका रूप धरके राजाके द्वार पर जाना और सोलह दिनतक द्वार न खोलनेका वचन लेकर प्रतिमा अपूर्ण रहना ।	१५४
जगन्नाथजीका गोरखको शाप देना और योगियोंका जगन्नाथ दर्शन बन्दहोना "	
समाप्ति और कबीर साहबका सिंहल-द्वीपगमन ।	"
संक्षेपसार और ग्रन्थपर साधारण दृष्टि	१५४
इति ।	





भारतपाथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित ।

श्री-भोपाल बोध ।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम-प्रेस,

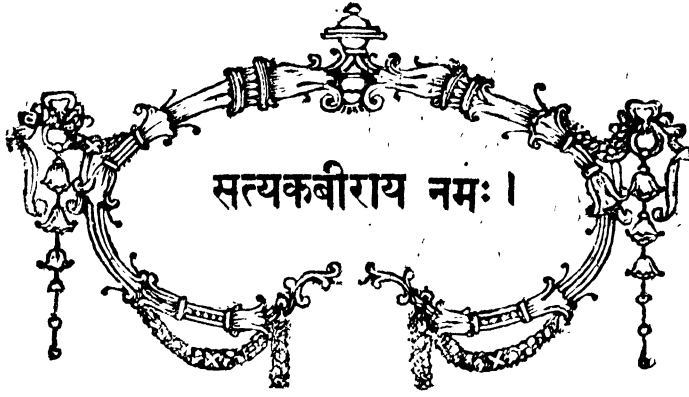
बम्बई.

संवत् १९९३ शके १८९८.

सत्य नाम ।



श्री कबीर साहिब ।



सत्यकबीराय नमः ।

यस्योपदेशमाराध्य नरो मोक्षमवाप्नुयात् ।
तं कबीरमहं वन्दे मनोवाक्कायकर्मभिः ॥

अथ श्रीबोधसागरे

चतुर्थस्तरंगः ।

श्रीग्रन्थ भोपालबोधप्रारंभः ॥

धर्मदासवचन चौपाई ।

धर्मदास कहै बन्दी छोरा । कैसे जीवन मारत चोरा ॥
केहि विधि जीवन मारत आई । साहिब सो मोहि भाष सुनायी ॥
कारण कौन मारत यम जीवा । मारन काल कौन है नीवा ॥

सतगुरु वचन ।

सद्गुरु कहै अंश सुनु वानी । महा कालकी कहौ निशानी ॥
धर्मराय आज्ञा जब करई । तबहीं मीच पृथ्वी पग धरई ॥

धर्मराय वचन ।

भयी सृष्टि बहुत अधिकारई । पृथ्वी भार न जाय सहाई ॥
ताते मीच पृथ्वी तुम जाऊ । जीवन धरि हम पर लै आऊ ॥
आनो जीव हमारे पासा । जाहु मीच पृथ्वी करु बासा ॥
पवनरूप घट जाइ समाओ । जीवन जाय बाँधि लै आओ ॥
खांसी जूडी ताप तिजारी । काम क्रोध होउ रोग अपारी ॥

लोभ मोह भ्रम फाँस अपारा । यह नहिं मर्म लखै संसारा ॥
यहि फन्दा जग सबहिं फन्दाओ । विरले हंस सुकृत बन्दाओ ॥

साखी—यहि विधि जगमें जाइके, जीव लाउ हम पास ॥
फन्दा डारहु जीव पै, होहु मीच दुख रास ॥

चौपाई ।

यहिविधिकाल जब आज्ञादीना । चले यमदूत सब साज सजीना ॥
उत पुरुष आज्ञा मोहि दीन्हा । जीव मुक्तावन कहँ पठावन लीन्हा ॥
कहे पुरुष सुनु ज्ञानी बाता । काल करे अब जीवन घाता ॥
घात करी सो भक्षण करिहै । बहुरि जीव भौसागर परि है ॥
काल दुष्ट बहु जीव सतावै । सारशब्द विनु मोहि न पावै ॥
याते जगमहँ अब तुम जाओ । जीवहिं चिताय लोक कहँ लाओ ॥
आज्ञा मोरि लेहु सहिदाना । जाइ जगत जिव लाओ निदाना ॥
साखी—सुकृत जाहु संसार में, उल्टी राह चलाउ ॥

शब्दसार जीवन कहो, काल हंस मुक्ताउ ॥

चौपाई ।

पुरुष आज्ञा हम शिर मानी । करि प्रणाम तब जगत पयानी ॥
देश जलंधर राय भोपाला । गयउ तहां जिन्दाके हाला ॥
जाई पौरिमें ठाढ रहायी । कह्यो पौरिया बहुत चितायी ॥
राजहिं लाउ हमारे पासा । दर्शन करै कर्म नृप नासा ॥
लागै कुंजी कुलुफ किवाँरा । बहुत लोग बैठे शठिहारा ॥
कोइ कहै न्याय जिन्द चाहै । कोइ कहै बटपार यह आहै ॥
कोई कहै मारि यहि खेदो । निर्गुण भेद तिन्है नहिं भेदो ॥
चारि पहर तब रैन बितावा । भयो भिनसार भोर हो आवा ॥
तब हम चरित दिखावन लागे । फूटि कपाट भये दोइ भागे ॥

सबै कँगूरा भुइ खसि परेऊ । ज्ञानी चली राय पहुँ गयऊ ॥
साखी—चकित सकल पौरिय, पाछे लगि सब धाय ॥

जहाँ राय भोपाल हैं, तहाँ पोरिया जाय ॥

चौपाई ।

करत गोहार पौरिया जाई । मार मार बहुत हँकराई ॥
राय भोपाल बैठि जहँ राजे । गये पौरिया तहँ सब भाजे ॥
कीन्ह सलाम दोई कर जोरी । यह जिन्दा बटपार बडचोरी ॥
कहैं पौरिया पौर उघारो । तुरत बुलाओ राय यहि बारो ॥
जिन्दा वचन नहीं हम माना । बीत रैन भये भोर सुजाना ॥
मंत्र एक जिन्दा तब करिया । फूट कपाट कँगूरा गिरिया ॥
तब जिन्दा आयो महाराजा । हम आये तेहि पीछे भाजा ॥
ना जानौ कौन यह आही । होय बटपार धसा घर माहीं ॥
साखी—हो राजा महाराज मम, कह्यो सत्य हम बात ॥
तत्क्षण जिन्दा मारहू, नातौ सब पर घात ॥

चौपाई ।

सुनो पौरिया कहे अस राजा । सुनिये वेद करौं तव काजा ॥
विप्र बुलाय सुनो मतिमाना । करिये तबै विवेक सुजाना ॥
आज्ञा वेद होय तब मारा । नहिं तो जिन्दा कहा बिगारा ॥
एतिक वचन राय मुख बोला । साहब आसन तबहीं डोला ॥
तत्क्षण हम अस लीला कीन्हा । रायमहल सोने करि दीन्हा ॥
कंचन कपाट रतनकी पांती । विपरीत बने खम्भ बहु भांती ॥
बने कँगूरा रतन रसाला । चकित राजा भये भोपाला ॥
साखी—भयो विवेक मन रायके, देखत मन पतियाय ॥
कौन पुरुष तुम समरथ, मो कहँ दरश दिखाय ॥

ज्ञानी वचन चौपाई ।

सत्य पुरुषके हम शठिहारा । जीवन काज आये संसारा ॥
पुरुष लोक सत्य परवाना । ताका मरम कोई नहिं जाना ॥
साखी-हो राजा भोपाल सुनु, चीन्हौं यमका जाल ॥
शब्द हमारा परखहु, नातो पैहो काल ॥

चौपाई ।

छोडहु राम नाम हित जाना । सद्गुरु बचन गहो मतिमाना ॥
अलख निरञ्जन छाडो देवा । भ्रम तजिकरु सतगुरुकी सेवा ॥
सुमता होय करो दृढ करनी । पहुँचो लोक पुरुषकी शरनी ॥
आवागमन रहित होय जाऊँ । जो प्राणी सत्यगुरु कहँ पाऊँ ॥
पुरुष अवाज जाव उबराई । ताते दर्शन दीन्ह तोहि भाई ॥
छन्द-करहु राजा भक्ति दृढ होय छोडु राज गुमान रे ॥
नारि पुरुष पुत्र पुत्री लेहु हिलिमिलि पान रे ॥
पुरुष नाम लै करहु आरती जीव तृण तुराय के ॥
पुरुष अंक ले पाव वीरा काल गहे नहिं आयके ॥

राजा भोपाल बचन चौपाई ।

तब राजा बन्दे दोनों पाई । करगहि महलन लैं जाई ॥
धन्य भाग मोहि दर्शन दीना । अधमजीव आपनकरि लीना ॥
कुटिल कठोर अधम अघ पापी । दर्शन दीन छुटै त्रयतापी ॥
महा मोह तम पुञ्ज अपारा । बचन तुम्हार कीन रविधारा ॥
उठो सुधर्मा मन चित लायी । साहब चरण पखारहु आयी ॥
छन्द-गुरु ब्रह्म रूप प्रकाश अघहर पुंज तमहिं विदारनं ॥
मुक्ति दाता अखिल त्राता कोटरवि छवि वारणं ॥
सोई रूप धरि जगत प्रगट होय जिनदीनपतितन दुखहरै ॥
भवसिन्धु ताप बुझाय शीतल जीव गहि आपन करै ॥

सोरठा—निज मन मुकुर सुधार, गुरु पदपंकज उर धारिए ॥
मिटै सकल अँधियार, अस्थिर घर तब पाइए ॥

चौपाई ।

राजा आज्ञा रानी मानी । साहब चरण पखारे आनी ॥
कञ्चन झारी लै जल धायी । साहब चरण पखारी आयी ॥
राजा रानी चरन धुवाये । अँचरन रानी तबहिं पुछाये ॥
चरण हिये मत्थे पर लायी । चरणामृत सबही मिलि पायी ॥
कीन्ह दण्डवत पलपल रानी । साहब दरस दीन्ह भल आनी ॥

ज्ञानी वचन ।

साखी—हमहिं जनि भार चढ़ावहु, हमरे नाम कबीर ।
अगम निगम वह पुरुष है, जे गहि लागो तीर ॥

रानी वचन—चौपाई ।

सुनिके रानी वचन पतियानी । तब साहब सों बिनती ठानी ॥
और पुरुष जानो नहिं नीका । तुम सतपुरुष आहु यहि जीका ॥
तुमहि पुरुष आहु दृढ़ जानी । और पुरुष नाहीं मन मानी ॥
रानी कहै सुनो महाराजा । साहिब आये तुमरे काजा ॥
रानी कहै बेगि गहु चरना । काल अजापी है निज मरना ॥
आये पुरुष हमारे पासा । हमरे मनकी पूजी आसा ॥

ज्ञानी वचन ।

सुनहु राय रानी निज वचना । यह तो जाल कालकी रचना ॥
मेढहु काम क्रोध हंकारा । माया मोह तजौ संसारा ॥
ज्ञान हेतु दृढ़ करनी करई । आवागमन का पूरा परई ॥
तजि संसार शब्द कहँ ध्याओ । गुरुगम पुरुष नाम चितलाओ ॥

साखी—ना फिर जन्मे जोइनि ना, स्वर्ग नर्क को जाय ॥

सो हंसा रहित भये, अजर अमर घर पाय ॥

यह तो माया जाल है, कठिन बीर मतवाल ॥
 जीव शब्द न मानई, एक दिन खैहे काल ॥
 मोह नदी विकराल है, कोई न उतारे पार ॥
 सतगुरु केवट साथ ले, हंस होय यम न्यार ॥
 चौपाई ।

कोटि जुहार होत नित तोहीं । कैसे कै लौ लावहु मोहीं ॥
 कैसे छाडो राज गुमाना । किमिछोडोपाखण्ड अभिमाना ॥
 कैसे छाडहु राज बड़ाई । कैसे छाडहु मुख चतुराई ॥
 बैठि सभा बोलहु हँसि बाता । कुँवर पचास संग निशि राता ॥
 बैठि महल महँ खेलहु सारी । कामिनि के सँग सदा बहारी ॥
 छुटे न नाति कुटुम्ब की आशा । छुटे न कञ्चन भोग विलासा ॥
 साखी—यह सुख कैसे छोडिहो, हम तो कथे निरास ॥
 सैन चैन जब छोडहु, चलहु पुरुषके पास ॥

राजः भोपाल वचन ॥

कहै राय सुनिये गुरुदेवा । मोकहँ राखु चरन की सेवा ॥
 मस्तक मोर दीजिये हाथा । दम अघ करमी होयँ सनाथा ॥
 छोडो सहस बीस मैं हाथी । अब मैं चलौं तुम्हारे साथी ॥
 अब हम दौलत छाडैं तुरंगा । छोडों सकल कामिनी संगी ॥
 देह गर्व औ राज गुमाना । छोडेउँ सकल भक्ति मनमाना ॥
 जब तुम अमृत वचन पुकारा । तेहि क्षण छूटा सकल विकारा ॥
 छन्द—दया निधान करुणा विलोकहु महादारुण दुख दहै ॥
 मैं अधम जीव अघोर अकरमी पतित पावन पद गहै ॥
 तुम ज्ञान घन विज्ञान आगर धर्म कंटक मर्दन ॥
 तुव नाम अमोल समरथ करहु दाया निर्धन ॥

सोरठा-अविरल भक्ति तुम्हार, पूरे भागते पाइये ॥

विनवों बारम्बार, पूरुष दस्श करवावहू ॥

ज्ञानी वचन-चौपाई ।

नाम पदारथ देउँ मैं तोहीं । तैं राजा चीन्हा दृढ मोहीं ॥
 पुरुष नाम एक यज्ञ कराओं । जेहि नाम ते हंस बचाओं ॥
 जरी केर एक चंदोवा तानो । कञ्चन केर सिंहासन आनो ॥
 दिवालगिरी लागे जरकेरा । मोतिन झालर लागु घनेरा ॥
 मोतिन लै भर थार धराऊँ । तापर आरति जोति लसाऊँ ॥
 कंचन कलसा पाँचो बाती । झारीजल हीर लै पाती ॥
 पूंगी फल औ स्वेत मिठाई । चन्दन पान धरो तहँ लाई ॥
 कदलीफल उत्तम तहँ जानो । मेवा अष्ट युक्त प्रमानो ॥
 कदलीपत्र कपूर सुगन्धा । आमपत्र लै चहुँ दिशि बन्धा ॥
 सात हाथ वस्तर ले स्वेता । पुष्प गुलाब कहौ मरु केता ॥
 नौ रतन लै थार धरायी । मनि मानिकके मध्य रहायी ॥
 यह सब विधि जब दीनबतायी । राजा सबही लीन सजायी ॥
 चौका बैठे सतगुरु जबहीं । रानी राय चरण गहे तबहीं ॥
 सवा लाख दीपक तहँ बारी । बहु आनन्द शब्द विस्तारी ॥
 सबमिलि हाथ नारियललीन्हा । आगे धरा दण्डवत कीन्हा ॥
 राजा तृण धरै मुख माँहीं । भये अधीन बाँधिकर आहीं ॥

राजा भोपाल वचन ।

तुम दीननके आहु दयाला । कृपा कीन्ह मोहि प्रतिपाला ॥
 अब जनि मोसन करहु दुराई । अपने कर लीजै मुकताई ॥
 यहि संसार नाहिं मम काजा । दारुण महा काल है राजा ॥
 अब तुम आपन लोक दिखाओ । महा पुरुष के दर्श कराओ ॥

नौ नारी मिलि विन्ती करई । कुँवर पचास ठाढ़ तहँ रहई ॥
 बेटी एक सुरजकी जोती । ताहि लिलार पुहे जनु मोती ॥
 साहब चरण धरा तिन आयी । अब हम चरण छोडिनहिं जायी ॥
 कीन्ह आरती नरियर मोरा । सकल जीवके तिनुका तोरा ॥
 सुकृत अंश बुलाये ज्ञानी । पुरुष दरश करि राजा आनी ॥
 लै अमरावहु लोक द्वारा । पल महँ लाय ठाढ़ बैठारा ॥
 दिना चार लगी राख्यो काया । वेगी जाय पुरुष पहँ आया ॥
 लिखिलिखि पान सबन कहँदीना । सकलो जीव बन्दना कीना ॥
 जेते जीव परवाना पावा । तेते हंसा लोक सिधावा ॥
 काया छोडि हंस चले आगे । सत्य सुकृत के चरनन लागे ॥
 लागी डोर पुरुषके पासा । तबै दूत यक कियो तमाशा ॥
 सुकृत संग हंस सब जेते । आये दूत कला धरि तेते ॥
 छाप तिलक तब विरचि बनार्थी । मारगमाँहि ठाढ़ भय आयी ॥
 आओ हंस पुरुषके पासा । नातो होवै ठाढ़ विनाशा ॥
 बोलै दूत हंस कहँ जायी । हम गुरुज्ञानी तोंहि सहायी ॥
 हमरे संग चलो हो राजा । हमरे शरण काल उठि भाजा ॥
 हंस रूप तुम धरि बटपारा । हम नहिं फन्दा परै तुम्हारा ॥
 सुकृत कहै हंस चलि आऊ । हमरे संग काल नहिं पाऊ ॥
 बाँँ अंग कालका धारा । दहिने पाँजी अहै हमारा ॥
 ताहि द्वार होय सुरतिलगाओ । बेगि दरश पुरुषके पाओ ॥
 सुकृत सागर पहुँचे जायी । अहो हंस तुम लेहु नहायी ॥
 सकल हंस मिलि पैठि नहावा । निरखै द्वीप द्वीप का भावा ॥

देखहिं लोक लोककी रचना । तब टेके सुकृतके चरना ॥
बैठे लोकमहँ हंस निहारा । जहँवाँ पुरुष आप विस्तारा ॥
सकल हंस तहँ बैठे पांती । सोरह रवि हंसनकी कांती ॥
पुहुप सेज सब हंस विराजा । तहँवाँ बुझाय नहिं रंक औ राजा ॥
कंचन भूमि देख अति शोभा । बरनौ कहा हंस तहँ लोभा ॥
राजा कीन्ह दण्डवत जबहीं । रानी पुत्र कीन्ह पुनि तबहीं ॥
अब नहिं भवमहँ जाउ लिवायी । अति आनन्द बहुत सुखपायी ॥

सुकृत वचन ।

सुकृत उत्तर कहे समझायी । चलू राय गहिर जनि लायी ॥
जो तुम गहर लगावहु राजा । विनशे ठाट तब होय अकाजा ॥
तब पछतैहो राय भुपाला । ततक्षण वेगि चलो यहि हाला ॥

राजा भोपाल वचन ।

विनशे ठाट होय जरि छारा । अब नहिं छोडब चरण तुम्हारा ॥
ऐसा लोक छोडि नहिं जायब । बार बार तुहि माथ नवायब ॥
छन्द-राजा करै बहु बीन्ती तुम दीन बन्धु दयाल हौ ॥
हंसन नायक परम लायक काटिया फन्दा काल हौ ॥
चरण शरण आधीन समरथ शरण राखो आपनो ॥
दास जानि बन्ध छोरो काल तेहि नहिं पावनो ॥

सोरठा-अब हम शरण तुम्हार, दास जानि दाया करो ॥

आयो पुरुष दरबार, आपन कै प्रतिपालिये ॥

जानी वचन चौपाई ।

एती विन्ती राजा ठानी । ज्ञानी देश जलन्धर जानी ॥
भवसागर सो ज्ञानी आये । पुरुष दरश कीन्हा तब जाये ॥
दिना चार ऐसेहि चलि गयऊ । राजा खबारि कोई नहिं दयऊ ॥

तबै पौरिया रावणहँ जायी । महल देखि कोइ नाहिं रहायी ॥
 कहँवा राजा कहँवा रानी । कहँवाँ पुत्र कुँवर रजधानी ॥
 कहँवाँ बेटी है चन्द्रावति । ताकर रूप बरनो कौनी गति ॥
 कहँवाँ रानी कामसुरंगा । परिमल अंग बसत जेहिसंगा ॥
 रोवत गयउ पौरिया द्वारा । जाय सबन सों कीन्ह पुकारा ॥
 जाति कुटुम्ब सब देखन आये । जिन राजा ते बहु सुख पाये ॥
 साखी—देखत अमिहत राजाकी, भयी अचम्भो बात ॥

रोवत कुटुम्ब दीवान मिलि, किन यह कीन निपात ॥

नगर लोग व्याकुल भये, घरघर रोवन लाग ॥

की यहि राजा मारिया, सबहिन केर अभाग ॥

चौपाई ।

कहै पौरिया सुनो दिवाना । तुम हम बूझो हम सब जाना ॥
 जिन्दा एक नगरमें आया । तासों राजा कौन फुँकाया ॥
 कह्यो राय मैं बहुत चितायी । तुरतहिं जिन्दा कहँ मरवायी ॥
 राजा बात नहीं पतियावा । वच सुनि राजा मोहि रिसावा ॥
 राजा कहै मुक्तिकरदाता । अस नहिं जाने करै निपाता ॥
 मोर कहा माना नहिं भाई । जस कीन्हा तस फल तिन पाई ॥
 साखी—वचन पौरिया सुनतही, विकल भये सब कोय ॥

आज गरासे राय कहँ, काल ग्रासै लोय ॥

चौपाई ।

नगर लोग तब कीन्ह विचारा । सब मिलि भागौ करौ सम्हारा ॥
 भूलि अन्ध शब्द नहिं चीन्हा । मारन काल तिहँ पुर दीन्हा ॥
 साखी—सुकृत अंश न पाइया, अन्धा गये भुलाय ॥
 धन्य राय भोपाल है, गहे शब्द चित लाय ॥

छन्द-गये राजा लोक कहँ तजिया सब मान गुमान हो ॥
 इमि हंस धर्मनि जो मिलै तुम देहु ताको पान हो ॥
 कहै कबीर जो शब्द मानै सकल तजि नामे गहै ॥
 अपवर्ग निश्चय ताहि कहँ नहिं पला पकडत काल है ॥
 सोरठा-जो हंसा इमि होय, शब्द सार तासों कहो ॥
 काग चाल तिन खोय, हंस चाल गहि लोक लो ॥

इति श्रीग्रंथभोपालबोध समाप्त ।

इति श्रीबोधसागरे कबीरधर्मदाससम्वादे भोपालबोधवर्णनो
 नाम चतुर्थस्तरंगः ।



इति
श्रीबोधसागरान्तर्गत
ग्रन्थ भोपालबोध
समाप्त ।



भारतपाथिक कबीरपंथो-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित ।

श्री-जगजीवनबोध ।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम-प्रेस,

बम्बई.

संवत् १९९३ शके १८५८.

सत्य नाम ।



श्री कबीर साहिब ।



सत्यं शुद्धं गुणातीतं कंजपर्णसमुद्भवम् ।
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥

अथ श्रीबोधसागरे

पंचमस्तरंगः ।

ग्रन्थ जगजीवन बोध ।

(गर्भ चितावनी)



धर्मदास वचन—चौपाई ।

धर्मदास कह सुनहू स्वामी । कहो गरभकी अन्तर्यामी ॥
कैसे जीव गरभ में आवे । कैसे जीव जठर दुख पावे ॥
कैसे जीव परवशै भयऊ । कैसे इन्द्री देह बनयऊ ॥
कैसे जीव अपन पद दरसे । कैसे जीव समरथ पद परसे ॥
कैसे जीव कौल बँधावे । कैसे साहब दर्शन पावे ॥
सो सब भेद कहो गुरु ज्ञानी । घट भीतरका भेद बखानी ॥

सतगुरु—वचन ।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा । तुम घट भली बुद्धि परकासा ॥
प्रथमैं सत्य नाम गुण गाऊँ । घट भीतर का भेद बताऊँ ॥
सबही जीव गर्भ में जावैं । कौल बान्ध कै बाहर धावैं ॥
चूके कौल गरभ का भाई । बारम्बार गरभ में जाई ॥
नौ नाथ सिद्धि चौरासी भारी । उनहूँ देह गरभमें धारी ॥

नौ अवतार विष्णु जो लीन्हा । उनहूँ गरभ वसेरा कीन्हा ॥
 तैंतिस कोटी देव कहाये । गरभ वास महाँ देह बनाये ॥
 जोगी जंगम औ तप धारी । गर्भवास में देह सवाँरी ॥
 गर्भ वास तब छूटे भाई । जब समरथ गुरु बाहँ गहाई ॥

गर्भोत्पत्ति वर्णन ।

नारि पुरुष बांधि संयोगा । कामबाण लगि देहसुख भोगा ॥
 सप्त धातुका अंग बनाया । जिह्वा दांत मुख कान उपाया ॥
 हाथ पावँ रु शीस निर्माया । सुन्दर रूप बनी बहु काया ॥
 नख शिख काहू नर बहु कीन्हा । दशही द्वार युक्ति करि लीन्हा ॥
 दश द्वार नौ नाडि बनायी । ऐसे सबतर बन्ध लगायी ॥
 दीन्हा ठेक बहत्तर भारी । नाडी बन्धन बहुत अपारी ॥
 नाद बिन्दुसों काय निरमायी । तामें प्रकृती आन समायी ॥
 हृद कारिगर हुन्नर कीन्हा । जैसे दूधमें जामन दीन्हा ॥
 तीनसों साठ चार बन्ध लायी । सोलह खाँई तहाँ बनायी ॥
 सोलह खाँई चौदह दवाँजा । अहूँठ हाथ गढ खूब विराजा ॥
 छाजे महल अधिकही छाजा । तामें जीव जो आनि विराजा ॥
 अजब महल बहु खूब बनाया । छठे महल हंस चितवन लाया ॥
 छठे मांस में सुरती आयी । दुख सुखकी तब पारख पायी ॥
 छै मासको भयो जब प्राणी । दुख सुखकी मति सबै पहिचानी ॥
 ओंधे मुख झूले लटकंता । मैल बहुत तहँ कीच रहंता ॥
 जठर अग्नि तहँ बहुत सतावै । संकट गर्भ तहँ अन्त न आवै ॥
 बहुत सांकरी पिंजार पोई । तडफडै बहुत निकसेनहिं जोई ॥
 मुखसों बोल निकसिनहिं आवै । करुना करि मन में पछितावै ॥
 अरुझै श्वास रोवै मन माहीं । कौन करमगति लागी आहीं ॥
 करुणा करि मन में पछितावे । ज्यों बकरी कंठ करद बैठावे ॥

ता दुखकी गति कासु कहीजै । करम उनमान तहँ दुःख सहीजै ॥
 यहि आलोच करै मनमाहीं । संगी मित्र कोइ दीखत नाहीं ॥
 पिछला जनम जब सूझा भाई । तब जिव दिलमा चिंता आई ॥
 स्त्री मित्र कुटुम्ब परिवारा । सुत नाती औ सैन पियारा ॥
 संगी सुजन बन्धु औ भाई । गरभ कि चीन्ह परी नहिं ताई ॥
 महा दुःख सो गरभ में पावे । बहुत वैराग हियामें आवे ॥
 सूझी सकल बाहरकी बाती । जो जिव पिछली होती जाती ॥
 जब जिव गरभमें ज्ञान विचारा । अब मैं सुमहं सिरजन हारा ॥
 सोच मोह जिव कछू न कीजै । अब सद्गुरु का शरणा लीजै ॥
 जिव अपने दिल माहि विचारे । तब समरथ को कीन पुकारे ॥
 सुनु धर्मदास एक कथा सुनाऊँ । एक राजाको जस बने बनाऊँ ॥
 राय जगजीवन ताहिकर नामा । जब वह पहुँच्यो एही ठामा ॥
 करन विन्ती लागु अधीरू । सतगुरु कहँ तब कीन्ही देखू ॥

जगजीवन वचन ।

साहिब संकट दूर निवारो । मैं निज खानाजाद तुम्हारो ॥
 दिल मैं करणा करै अतिभारी । अब मोहि साहब लेहु उबारी ॥
 करै अस्तुति बहुतै सुधिलावै । तुमविनु खाविन्द कौन छुडावै ॥
 अब दुख दूर निवारो स्वामी । कौल कहूँ प्रभु अन्तरयामी ॥
 बाहर निकारो आदि सनेही । बहु दुख पावै मेरी देही ॥
 मैं जन प्रभुको दास कहाऊँ । आन देव के निकट न जाऊँ ॥
 सतगुरुका होय रहों चेरा । दम दम नाम उचाहूँ तेरा ॥
 नित उठि गुरु चरणामृत लेऊँ । तन मन धनै निछावर देऊँ ॥
 जो मैं तन सों कहूँ कमाई । अर्धमाल मैं गुरुहि चढ़ाई ॥
 कुबुद्धि सीख काहू नहिं मानूँ । हराम माल जहर करिजानूँ ॥
 कुलकी त्यागूँ मान बडाई । निर्मल ज्ञान एक संत सगाई ॥

रात दिवस ऐसे लव लाऊँ । करत पुरत भक्ति गुरु कराऊँ ॥
 दुख सुख परे सो तनसे सहूँ । भक्ति दृढै गुरु चरणे रहूँ ॥
 परत्रिया ताकूँ नहिं कोई । जननी बहन करि देखूँ सोई ॥
 दुष्ट बैन कबहूँ नहिं खोलूँ । शीतल बैन सदा मुख बोलूँ ॥
 स्वास उस्वासमों रटना लाऊँ । आन उपाय एको नहिं चाऊँ ॥
 तन मन धन निछावर देऊँ । सतगुरु का चरणामृत लेऊँ ॥
 सतगुरु कहैं सोई अब करिहों । आज्ञा लोप पाओं नहिं धरिहों ॥
 और सकल बैरी कर जानूँ । सद्गुरु कहैं मित्र कर मानूँ ॥
 ज्ञान बतावै सोई गुरुदाता । तन मन धन अरपूँ उन ताता ॥
 तन मन धन मैं उनको देऊँ । नित उठि गुरुचरणामृत लेऊँ ॥
 यहि गर्भवासमें कौल बँधाऊँ । बाहर निकारो धुर निर्बाऊँ ॥
 जो मैं छूटूँ गरभ सबेही । तन मन अरपूँ औ गुरु देही ॥
 एक नाम सांचा कर मानूँ । और सबै मिथ्या कर जानूँ ॥
 कहा अस्तुति करों गुसाई । बहु दुख पावत हूँ या ठाई ॥
 यहां कोई मित्र नहिं भाई । मातु पिता नहिं लोग लुगाई ॥
 देवी देवका कछु न चालै । गुरु विन कौन करै प्रतिपालै ॥
 अब तो खबर परी यहि ठाहीं । और कोईका चालै नाहीं ॥
 पिछली बात मैं हृदय जानी । कोई काहूका नहीं रे प्राणी ॥
 अपने साथ चलेगा सोई । जो कछु सुकृत करे सो होई ॥
 मद माया में जिव भरमाया । सो तो कोई काम न आया ॥
 बहुत विचार किया मैं सोई । अन्तकाल अपनो नहिं कोई ॥
 ऐसी करुणा करै विचारा । दया करो दुख भंजन हारा ॥

साहिबवचन ।

तब साहिब यों कहै पुकारा । कहि समझाया तोहिं बारम्बारा ॥
 अनेक बार गरभमें आया । तैं रतीकर्म भरम नहिं पाया ॥

कई बेर तैं कौल बँधावा । कई बार तैं गर्भ में आवा ॥
गर्भ में ज्ञान उपजा है तोही । संकटमें सुमिरे सब कोही ॥
बाहर निकसि नहिं उपजै ज्ञाना । अंधकार अहंकार समाना ॥
बार अनेक भुलाना भाई । नहिं सतगुरु की दीक्षा पाई ॥
गरभ त्रास तब छूटै भाई । जब सतगुरु कहँ बाँह समाई ॥

जगजीवन वचन ।

बोलत वचन कहो गुरु देवा । जीवकी अवधि बताओ भेवा ॥
दीन दयाल दया गुरु कीजै । बूडत जीव आपन करि लीजै ॥
दयावंत गुरु दीन दयाला । मुक्तिरूप जीवन प्रतिपाला ॥
मोकों अभय दान गुरु दीजै । अन्दर ज्ञान उजालो कीजै ॥

सतगुरुवचन ।

गरभ बासमें कौल बन्धावा । सो कैसे तैं न बाहर निर्वावा ॥
बहु संकट तोहि उपजे ज्ञाना । बाहर निकसत सब बिसराना ॥
जोई जीव कौल निर्वाहै । सोई नहिं गरभ बास महँ आहै ॥

जगजीवन वचन ।

अब नाहीं भूलूँ गुरु देवा । तन मन लाय कहूँ गुरु सेवा ॥
मोक्कूँ बाहिर काढो स्वामी । कौल न चूक्कूँ अन्तर्यामी ॥

सतगुरु वचन ।

कौल बोल सब चौकस कीना । तबहीं गर्भ सो बाहर लीना ॥
नौवें मास जो बाहर आया । लोग कुटुम्ब सबही सुख पाया ॥
सबही हरष करै मन माई । पुत्र हेतु सब करैं बधाई ॥
बाजा बाजै करै उछावा । गीत नाद अधिके चित आवा ॥
सबै सजन मिलि गूढ़ बँटावा । रैन समय तिय मंगल गावा ॥
नगरलोक सब करैं बधाई । घर घर साजे देइ लुगाई ॥
घर राजाके जनम सो पइया । कौल किया सो सब विसरैया ॥
पीसुन मिले सबहिं धुतारा । सबहीं ज्ञान भुलावन हारा ॥

ताका नाम सुनो रे भाई । महा जालके फन्द फँदाई ॥
झूठे झूठ मिले संसारा । नरक कुण्ड में नाखन हारा ॥

पिसुन कर्म वर्णन ।

प्रथम माता ।

माता मनमें करै बखाना । यह भल उग्यो आजुको भाना ॥
बालक जन्मा मोरे कोखा । जन्म भरे की भागी धोखा ॥
नाइन ।

नाइन एक बधाई लायी । तिन तो एकै बात जनायी ॥
मेरा कहा करो तुम कामा । नाक छेदि कहो नाथू नामा ॥
नाल औवल पीसो गाढो । दिहली को तब बालक काढो ॥
यह तो बात मैं गुप्त सुनायी । मुवा जिवाका तो मुहि दाई ॥
पिता ।

पिताके मनमें ऐसी आवैं । उमगे हरष हिय नाहिं समावैं ॥
बाटे पान मिठाइ बहूता । धन्य भाग्य मोर जनम्यो पूता ॥
काका ।

काका कहै मैं उतरूं पारा । बालक खेलै घरके द्वारा ॥
कर्म जोर मोरे बड कीन्हा । क्षेत्रपाल मोहिं बालक दीन्हा ॥
दादा ।

दादा सुनिकै दौरे आये । पोता देख बहुत सुख पाये ॥
दासी हाथे कुवँर मैगाया । हेतु प्रीति से कण्ठ लगाया ॥
दादी ।

दादीके मन हर्ष अपारा । लेत बलाई बारम्बारा ॥
मैं करी बहुत सतियनकी सेवा । भये प्रसन्न मोर कुलदेवा ॥
नानी ।

नानी आवत वेगि उठाया । मुख चुम्बा है कण्ठ लगाया ॥
लून ले शिर ऊपर वारा । द्रव्य माल पुनि बहुत उतारा ॥

नाना ।

अब नाना मुख देखन आया । दौहित्रादेखि अधिकसुखपाया ॥
उमँगो हरष हिये न अमायी । कंचन चूरा दिया बधायी ॥

भुवा ।

बहुत करै हरष भुआ बाई । दिनदिन अधिकी करै बधाई ॥
मुख चुम्बा दै कण्ठ लगावे । हिये हर्ष उमँग नहिं मावे ॥

मौसी ।

मौसी मन बहु हर्ष उठावै । धन्य बहिन को कोख तरावै ॥
मुख चूमे अरु कण्ठ लगावै । अतिशय उमँग हिये नहिं मावै ॥

अडोसी पडोसी ।

बुढिया एक जो बोलै आयी । तिन एक बात कही समझायी ॥
बालक तैल लौन सों लीजै । लौना नाम कहे धरि दीजै ॥

दूसरी पडोसिन ।

दूजी कहै सुनौ रे बाई । बालक डारो छीतर माई ॥
सांचो टोना यही कहावों । इनको छीतर कहि बतलावो ॥

तीसरी पडोसिन ।

तिया तीसरी बोलै सयानी । मैं जान्यों सो काहु न जानी ॥
कोदरा बरोबर तौल के लीजै । याकर नाम कोदरसिंह कीजै ॥

चौथी पडोसिन ।

चमारिन गोद यहीको डारो । मोल लेइ पुनि ताहि उजारो ॥
चमरूसिंह नाम यहि केरा । बालक याते जिवै घनेरा ॥

पांचवी पडोसिन ।

याको घूर गुनौरे डारो । दूत पराछित या विधि मारो ॥
घूरन सिहँ अरु गेनौ नामा । दीजै ताहि सुधरे सब कामा ॥

छठीं पडोसिन ।

यह सब बात बताओ माई । चूल्हे डारो चुल्हन कहाई ॥
 जेती नारि आयीं तेहि बारा । सबहिन आपन मता उचारा ॥
 कोइ काहू कोइ काहु बतावैं । स्यानप आपन सबहि जतावैं ॥

ओझा और स्याने ।

बुढवै एक जो सीस धुनावैं । वाके शिर पर भैरों आवैं ॥
 सो कह हमको बैल बधाओ । भैरोंसिंघ कही बतलाओ ॥
 देवी पूजक एक तब आया । देवीसिंह तब नाम बताया ॥
 गाजी मुर्गी कोइ चढावै । गाजीदीन तब नाम बतावै ॥
 यहि विधि अनेकनहू आये । आपन आपन उक्ति सुनाये ॥

पुरोहित ।

घरको पुरोहित ऐसी कही । मनको मनोरथ पूरण सही ॥
 यह तो बडा सपूत कहावै । इनके तुलै कोई नहीं आवै ॥
 पुरोहित कह यजमान है मेरा । कुल देवी भैरोंका चेरा ॥

चारण और भाट ।

चारण भाट जपै महामाई । भोजक भाट तहां चलि आई ॥
 सबही मिलि दीनी आशीशा । महामाई सुत कीन्ह बखशीशा ॥

मुसलमानी फकीर ।

दर्वेश एक कहै समुझाई । नाम फकीरा कहो रे भाई ॥
 बांधि गांठ गले में दीजै । सब पीरों का चरणा लीजै ॥

योगी ।

जोगी एक तहां चलि आया । मेरी भभूत का परचा पाया ॥
 कहा हमारा सुनिकै लीजै । याका नाम सदाशिव दीजै ॥

दिगम्बर ।

यंत्र मंत्र जतीकरि लाये । करि तावीज गले पहिराये ॥
 वज्र वटु सूअरदांत मंगायी । एक सुपारी माहि मढायी ॥

भोजपत्रमें यंत्र मढाया । सात भांतिका रेशम लाया ॥
गूगल बारि धूप लै कीन्हा । सो पहिराय गलेमें दीन्हा ॥
पण्डित लोग ।

ब्राह्मण सबही नगरके आये । पत्रा पोथी साथहिं लाये ॥
पीपल केरे पान मँगाया । लगन साधिके नाम सुनाया ॥
जगजीवन नाम जनमका सही । याका मरण होय ना कबही ॥
द्रव्य माल दक्षिणा दीना । जनमपत्रिका लिखाय जो लीना ॥
बहु विधि सो संस्कार कराया । मोह फांसमें पकरि दबाया ॥
गर्भ कौल तो सब बिसराना । अमर रहनका जतन बहु ठाना ॥
एक सो बात गुप्त ना होई । स्याना लोग कहैं सब कोई ॥
फन्दा अनेकन में फन्दाई । कौल किया सब गया भुलाई ॥
झूठ झूठ मिलै सब कोई । इनते काज एको नहिं होई ॥
पिछली कौल सबै विसरानी । महा जाल में बँधे प्राणी ॥
यह सब झूठे पाखण्ड साजू । इनसूं सरै न एको काजू ॥
साखी—कहैं कबीर सब चेतहु, आगे काल कराल ।

आल जँजाल तम छाडिके, पिछले लोक सँभाल ॥

चौपाई ।

जौन कौल गर्भ में कीया । सो मूरख विसारि—सब दीया ॥
फिर भी कठिन होगया भाई । तब तुम करिहौ कौन उपाई ॥
इतने सब मिलि करहिं बधाई । तामें तेरा कौन सहाई ॥
तुम अबकी चेतौ जो नाहीं । मानुष जनम भाग बड पाही ॥
साखी—ये तेरे मित्र नहीं, सब वैरी करि जान ।

उबरा चाहो कालते, गुरुहि मित्र कर मान ॥

चौपाई ।

एक जीव बैरी बहुताई । यूथ युत्थ बाटन सब लाई ॥
कोई जीवको का तकसीरा । सबको जडिया मोह जँजीरा ॥

ज्ञान ध्यान जिव कैसे पावैं । इतने पिशुन ताहि भरमावैं ॥
 देखो दिलै करि ज्ञान विचारा । किहिविधि उत्तरो भवजल पारा ॥
 रे कुबुद्धि दुख में मत झूलै । पिछला कौल बोल मति भूलै ॥
 इक दिन फेरि परैगा गाढा । मुशुक बांधि यम करिहैं ठाढा ॥
 तुम मति जानो अमर है काया । यह दीसै सुपनेकी माया ॥
 यहि चकचौंध भुलो मति कोई । सेंवल फूल जैसा तन होई ॥
 जैसे नींद में सुपना आवै । जागि परै तब कछु न पावै ॥
 यह तन ऐसे देखो भाई । झूठे झूठ मिलैं सब आई ॥
 दिनाचार चटक दिखलावै । अन्तकाल ग्रासन कूँ धावै ॥
 काल जंजाल सों छूटा जाई । गुरुसे प्रीति करो रे भाई ॥
 सतगुरु ऐसी युक्ति लखावै । जासे जीव परम पद पावै ॥
 सुनो जीव अबूझकी बाता । जनम गवाँवै करम कमाता ॥
 हर्ष मोह में सबहि सुनाऊँ । जेते घर में सबहि दिखाऊँ ॥
 एक वर्ष लागि डोल डोलावै । पशू रूपमें जनम गँवावै ॥
 उखली जीभ तोतला बोलै । मातु पिता सब हर्षित डोलै ॥
 आल जंजाल बोले बहकावे । त्यों त्यों हरष हिये नहिं मावे ॥
 परी करै औ ऊभा धावै । बाहर भीतर दौडा आवै ॥
 कंचन घूंघुर बेगि गढ़ाई । रेशम केरी डोर पोवाई ॥
 सोना रूपा बहु पहिराया । हीरा मोती भूल भुलाया ॥
 बालन सँग में खेलन जावै । नाच कूद के घरही आवै ॥
 मन में आनंद करै चंचलाई । सोच फिकर कछु व्यापे नाई ॥
 करै कुतूहल मनमें सोई । दिन दिन तेज सवाया होई ॥
 आकुल बोलै सोच न आनै । कूर कपट कर बहु मुख गानै ॥
 संकटका दिन चित्त न आवै । करै अनीति जोई मन भावै ॥
 चित्तमें दुर्मति रहै अति घनी । महा दुष्ट बुद्धि पापी सनी ॥
 द्वादश वर्षकी भयी है देही । अनन्त उपाय करै नर केही ॥

प्रकट काम काया के भीतर । सोचफिकिर नहिं व्यापे अन्तर ॥
 अन्ध करै बहुत अहंकारा । निरखै तिरिया घर घर द्वारा ॥
 परवश दूती आनि मिलावै । जोर करै तो पकरि मँगावै ॥
 नाहकको तू कान लगावै । नहिं मानै तो यमघर जावै ॥
 अघ करमी होय तन डोलै । जोर बहुत गरभ सो बोलै ॥
 आंखिन माहीं बर्षे लोई । ज्ञान ध्यानकी सुधि ना होई ॥
 गुरु चरचाके निकट न जावै । हँसी मसखरीसों मन भावै ॥
 झूठी बात करै लबराई । तासों हेतु करै मितराई ॥

साखी—यह नर गरभ भुलाइया, देखि मायाको झौल ।

कहै कबीर सब चेतहु, सुमिरि पाछलो कौल ॥

चौपाई ।

इन्द्री स्नेह न मानै चेता । माया गर्ब फिरै मैमंता ॥
 ईगुण प्रगटा अन्तर माहीं । कामातुर होय करी विवाही ॥
 पहले विवाही एक लुगाई । बहुत प्रेम सँग ताहि लिवाई ॥
 विषय विवेक फिर उपजा भारी । पीछे व्याही सुन्दरि नारी ॥
 अँगस्वरूप कामिनि अधिकाई । कामातुरसों रहे लपटाई ॥
 महा अनन्द भये मन माहीं । एक पलक सँग छाडें नाहीं ॥
 करै खवासी कहत है दासी । बन्धा मोह जाल की फांसी ॥
 खिदमतगार सहेली धनी । कई नायिका कई रामजनी ॥
 नव नव खण्डके महल बनाये । सेना केरे कलस चढाये ॥
 करी बिछावन तहँ बडभारी । गादी तकिया बहुत अपारी ॥
 बहुत मोलको अतर मँगावै । फूलन केरी सेज बिछावै ॥
 कहँलगि बरनूं यह विस्तारा । मायाविनको बार न पारा ॥
 टपका स्वाद भया तर अन्धा । आवै यम तब करै बहु फन्दा ॥
 नित नित त्रिया नई संयोगा । खान पान और षट रस भोगा ॥

मता विषय रस कछू न सूझे । भैरों भूत शीतला पूजै ॥
 भूलै कौल गरभकी बांधी । अब चकचौंधी आई आंधी ॥
 सबही जीव कौलकरि आवै । बाहर निकसि सब बिसरावै ॥

सतगुरुके आगमन ।

ऐसे जीव भूल रहे सारे । तब सतगुरु आइ पगु धारे ॥
 जीव चितावन सतगुरु आये । अलीदास धोबी समझाये ॥
 और हंस बहुत चेताये । फिरत फिरत पाटनपुर आये ॥

सतगुरुका पाटनपुरमें पहुँचना ।

सतगुरु आये पाटन ठाऊँ । जगजीवन राय बसै तेहि गाऊँ ॥
 राय न मानै भक्ति विचारा । हँसे भक्तको बारम्बारा ॥
 भक्त रूप सब शहर निहारा । कोउ न मानै कहा हमारा ॥
 तब आपन मन कीन विचारा । कैसे मानै शब्द हमारा ॥
 जाइ बाग में आसन कीन्हा । गुप्त रहे काहू नहिं चीन्हा ॥
 द्वादश वर्ष भये बाग सुखाने । सुलगे काष्ठ होय पुराने ॥
 चार कोस तेहि बाग लँबाई । तीन कोसकी है चकलाई ॥
 तहां जाय आसन हम कीन्हा । रहों गुप्त काहू नहिं चीन्हा ॥
 तहँवां मैं कौतुक अस कीया । सूखे बाग हरा कर दीया ॥
 विकसे पुहुप जीव सब जागे । सबने हरियर देखा बागे ॥
 माली जाय कै दीन बधाई । जागा भाग तुम्हारा भाई ॥
 देखा बाग जाय तेहि वारा । फल फूलनका अन्त न पारा ॥
 हर्षा माली बाहर आया । देखा बाग बहुत सुख पाया ॥
 फूलन छाब भरी दुइ चारी । नाना विधिके फूल अपारी ॥
 नाना विधिके मेवा लाया । लै माली दरबारे आया ॥
 बैठा राजा सभा मँझारा । उमरावनको तहाँ न पारा ॥
 माली सब लै धरी रसाला । राजा पूछ करे ततकाला ॥

राजा जगजीवन वचन ।

कौन देश तैं माली आया । फूल अनूप कहाँसे लाया ॥
कौन बागके फलन विशेषा । कानो सुनी न आंख न देखा ॥

माली वचन ।

नौ लखा बाग हरा होय आया । फल प्रसून सब नये बनाया ॥
सुनिके राजा हरषा भारी । संग उठी चली परजा सारी ॥

राजावचन ।

कहु दिवान यह कौन प्रकारा । समझि बूझिके करो विचारा ॥
ज्योतिषी पण्डित सबै बुलाये । पत्रा पोथी सबही लाये ॥
ज्योतिषि वचन ।

लगन सोधि सब ऐसी कही । कोई पुरुष यहँ आये सही ॥
है कोई नर कै कोई परेहू । सोधो जाय बाग सब हेहू ॥
हेरै राय बागके माहीं । बैठे संत यक ध्यान लगाहीं ॥
राजा जाय धरा तब पाई । नगर भरेकी परजा आई ॥
कहे राजा धन मेरो भागा । दर्शन पाय अमर होय लागा ॥
आलसी घर गंगा आयी । मिटिगई गमीं भयी शितलायी ॥

सतगुरु वचन ।

तब राजासों कही पुकारी । सुन राजा एक बात हमारी ॥
हम जनि भार चढाओ भाई । काहे को तुम देहु बंडाई ॥
अच्छा बाग विमल हम चीन्हा । तासों आये आसन कीन्हा ॥
ऐसा तुमहीं बाग बनाया । नाना विधि के रूख लगाया ॥
आसन किया देखि हम ठारी । बहुत फूल फलकी अधिकारी ॥

राजा वचन ।

फिरि कै राजा शीस नवाया । द्वादश वर्ष भये बाग सुखाया ॥
सूखा बाग भये बहु बारा । नहिं कोई लोक आहे संसारा ॥

छाडी फल-फूलनकी आसा । कोइ न आवै बागके पासा ॥
 तुम समर्थ पग धारे आई । हरा हुआ बाग सब ठाई ॥
 राजा कहै दया अब कीजै । मोकूँ मुक्तिदान फल दीजै ॥
 मेरे मस्तक धरहू हाथा । मैं रहूँ सतगुरु तुम्हरे साथ ॥
 सतगुरु वचन ।

तुमको कौल भुलाना भाई । किया सो कौल गया बिसराई ॥
 संकट गरभ में बाचा दीन्हा । बाहर निकसि करम बहु कीन्हा ॥
 किया कौल जब गये भुलाई । तब हम आइके चरित दिखाई ॥
 बहु विधि बात कही चेताई । बाहर निकसि बुद्धि पलटाई ॥
 तुमको तो कछु सूझत नाही । फन्दा मोहजाल के माहीं ॥
 आवै यम दश द्वार मून्दी । तबहीं बाँधि करैगा कून्दी ॥
 सोच बूझ देख मन माहीं । इतने में तेरा कौन सहाहीं ॥
 पिसुन मिलैं सब वार न पारा । नरक बास में नाखन हारा ॥
 बहु विधि तुमसों शब्द पुकारा । किया कौल नर भूल गवाँरा ॥
 घर घर हम सब कही पुकारी । कोइ न मानै कही हमारी ॥

हे राजा जब तू मातृगर्भमें था तब तू वचनबद्ध हुआ था कि भजनके अतिरिक्त अब और कुछ न करेंगे । उस दुःखमें तो तू पुकारता था तथा हाय हाय करता था कि, मुझको इस दुःखसे निकालो । जब तू गर्भके बाहर आया तब तू अपनी प्रतिज्ञा भूल गया और शारीरिक कामना तथा पशुधर्मके वशीभूत होकर तूने कौन कौनसे कुकर्म न किये ? सत्यगुरुकी दयाको तू एकबारगी भूल गया, भोगविलासमें फँसकर अन्धा होगया और मायाने तेरे ज्ञानको बिलकुलही नष्ट करदिया । जब यमदूत आवेंगे और तेरी मुश्कें बाँधकर नरकमें लेजावेंगे तब तेरा कौन मित्र सहायता करेगा ? और तुझको उनसे कौन छुडावेगा ? राजा ! तू सोच तथा समझ कि, वे लोग जिन्हें तू अपना

मित्र समझताहै उनमेंसे कौन तेरा उस समय सहायक होगा ?
कौन तुझको नरकसे बचावेगा ? गर्भमें मैंने तुझको बहुत समझाया
था सो हे गँवार ! तू उन सब बातोंको भूलगया मैंने सबसे घर
घर पुकार कर कहा मेरा कहना किसी मूर्खने न माना । इतनी
बात सुनकर राजा बोला ।

राजा वचन-चौपाई ।

अब तो गुरु होहु सहाई । मोकों यमसे लेहु छुड़ाई ॥
सबही करम बरसकै दीजे । डूबत मोहिं उबारके लीजे ॥
सैन करी पालकी मैगाई । लै सद्गुरु को माहिं बिठाई ॥
पाँव उधार काँध धर लीन्हा । तबही महल पयाना कीन्हा ॥
सद्गुरु पग धर महलके माहीं । सब रानिनको राय बुलाहीं ॥
समरथ दरशन दीन्हां आनी । धनधन भाग्य तुम्हारो रानी ॥
सद्गुरु को पलंगा बैठाई । सब मिलि पाँव पखारो आई ॥
राजा भाखै शीश नवाई । मोकों राखो गुरु शरनाई ॥
करिये सद्गुरु जीवको काजा । दया करो मैं लाऊँ साजा ॥
अब हम शरना लेब तुम्हारी । दया करो तन दुखत हमारी ॥

सतगुरु वचन ।

तब कहे सतगुरु लेहु सँभारी । राजा सुनहू बात हमारी ॥
कस चले राजा लोक हमारे । मैं नहिं देखू लगन तुम्हारे ॥
कोटिन ज्ञान कथे असरारा । बिना लगन नहिं जीव उबारा ॥
जो कोइ बूझे भक्ति हमारी । ताको चहिये लगन सँचारी ॥
जैसे लगन चकोरकी होई । चन्द्र सनेह अँगार चुगोई ॥
ऐसे लगन गुरुसे होई । धर्मराय शिर पग धर सोई ॥
तुम तो हो मोटे महराजा । कैसे छोडिहौ कुल मर्यादा ॥
कैसे छोडिहौ मान बड़ाई । कैसे छोडिहौ मुख चतुराई ॥
कैसे छोडिहौ हाथी असवारा । कैसे छोडिहौ ग्रंथ भँडारा ॥

कैसे छोड़िहौ काम तरंगा । कैसे राजसे करो मन भंगा ॥
 कैसे छोड़िहौ कनक जवाहिरा । कैसे छोड़िहौ कुल परिवारा ॥
 तुम तो उनकी बाँधी आसा । हम तो राजा कथैं निरासा ॥
 जो तुम तजु अन्तरकी बाथा । तबहीं चलो हमारे साथी ॥
 भक्ति कठिन करी ना जाई । काहे को हिंस करत हो राई ॥

राजा वचन ।

राजा कहे दोऊ कर जोरी । सुनिये समरथ बिनती मोरी ॥
 नगरके सब षट् बरन बुलाऊँ । यहि अवसर सब माल लुटाऊँ ॥
 तुम तो कह्यो बाहर लेव वासा । मैं तो देहकी छोड़ों आसा ॥
 अमृत वचन पियाओ आनी । हंस उबार करो निरबानी ॥
 नगर कोटकी छोड़ी आसा । निश दिन रहूँ तुम्हारे पासा ॥
 हुकुम करो सोई मैं लाऊँ । करो दया मैं शीस नवाऊँ ॥
 उमँग उठे हर्षित मन मोरा । थकित भये जनु चन्द्र चकोरा ॥
 सूखा बाग जो फल परकाशा । तबते पूजी मनकी आशा ॥
 कसनी कसो सो सहूँ शरीरा । तबहूँ प्रीत न छोड़ूँ तीरा ॥
 जो तुम कहो सो भक्ति कराऊँ । दया करो तो शीश चढाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

तब समरथ अस शब्द उचारा । अब आरति का करो विस्तारा ॥
 चार गुरुको चौक पुराओ । तिनका तोरायके जल अरपाओ ॥
 राजा गर्भ निवारैं तोरा । भाव भक्तिसे करो निहोरा ॥
 भाव भक्ति हम चाहें राजा । धन सम्पत्तिसे ना कछु काजा ॥

राजा वचन ।

दया करो सो साज मँगाऊँ । कौन वस्तु लै आगे आऊँ ॥
 मैं हूँ जीव मतीका भोरा । कहूँ जानूँ चौका के ब्योरा ॥
 समरथ कहौ मैं आनूँ सोही । चौका जुगति बताओ मोही ॥
 करहूँ गुरु चौका विस्तारी । जीवहि यमसों लेहु उबारी ॥

सतगुरु वचन ।

चार गुरू को साज मँगाओ । चार सवा सौ पान लै आवो ॥
 चार सवा सेर कन्द मँगाओ । आठ अंश नरियल लै आओ ॥
 चार माला अरु लोटा चारो । सतगुरु आगे लाकर धारो ॥
 चार थाली चार गादी कीजे । चार चँदोवा ताने लीजै ॥
 चार कलस जल भरि धरवाओ । तब सतगुरु के आगे आओ ॥
 सब यह साज आगे धरि दीन्हा । तब सतगुरुसे विन्ती कीन्हा ॥

राजा वचन ।

मैं हूँ जीव करम बहु कीना । कैसे यमसों करिहो भीना ॥
 गिनत गिनत नहिं आवे चीना । वारम्बार मैं औगुन कीना ॥
 ऐसा करम किया मैं भारी । कैसे यमसे लेहो उबारी ॥
 एक बात गुरु कहौ विचारी । मो सम पतित आगे कोइ तारी ॥
 तब सतगुरु बहुत विहँसाने । फिर राजासों निरणय ठाने ॥

सतगुरु वचन ।

सतयुग सत्यसुकृत मम नाऊँ । जाइ मथुरामें धारेउँ पाऊँ ॥
 खेमसरी ग्वालिनी उबारी । बहुत जीव लै लोक सिधारी ॥
 द्वादश पहुँचे पुरुष हजूरी । और हंस द्वीपन मँझूरी ॥
 त्रेता युगे मुनिन्दर नाऊँ । नगर अयोध्या धारे पाऊँ ॥
 हंस बयालिस लीन्हा लारा । पहुँचे तहाँ पुरुष दरबारा ॥
 और हंस द्वीप मँहँ गयऊँ । जिन जैसी जिव देह बनयऊँ ॥
 अब द्वापरका कहूँ विचारा । नरहर राजका किया उधारा ॥
 सात सौ हंस पावन कीन्हा । कुटुम्ब सहित पयाना दीन्हा ॥
 चन्द्रविजय घर इन्दुमति नारी । संकट राजा लीन उबारी ॥
 केता पूछो जीव सनेही । गिनत गिनत ना आवे छेही ॥
 युगन युगन भवसागर आऊँ । जो समझे तेहि लोक पठाऊँ ॥

शब्द हमारा मानै कोई । तौ नहिं जाय यमपुरी सोई ॥
इतनी बात कही समझायी । दिल राजाके प्रतीति समायी ॥

राजा वचन ।

धन्य भाग मेरा कुल कर्मा । कोटिन यज्ञ कियो तप धर्मा ॥
सत्यगुरु आय दरस मोहि दीन्हा । बृझत हंस उबार कै लीन्हा ॥
हो प्रभु मोर करो निर्वेरा । मैं तो चरण कमलका चेरा ॥
कहु संदेश नगर में भाई । जय जीवन राय लोकको जाई ॥
नेगी जोगी सबहि बुलायी । और नगरकी परजा आई ॥
चन्दनका सिंहासन कीन्हा । चौका पूरि कलश धरि दीना ॥
सतगुरु शब्द उचारे लीना । युक्ति साजि गादी पगु दीना ॥
सब रानिनको बेगि बुलायी । करि दण्डवत गुरुचरणा आयी ॥
जीव प्रति नरियल ले आये । सो सतगुरु को आनि चढाये ॥
साखी-सब रानी बिन्ती करैं, सुनु समरथ चित लाय ।

महा अकरमी जीव हम, सबहि लेहु मुकताय ॥

चौपाई ।

जेठी रानी चन्द्रमति जोई । सतगुरुकी गति जानी सोई ॥
दूजी रानी है मनकी युक्ती । निर्भय होय करै गुरु भक्ती ॥
तीजी रानी है मनपोई । लज्या कारण ना मानै कोई ॥
चौथी रानी भानुमति आही । जीवत सती सुजानो ताही ॥
पांचवीं रानी धन्ना बाई । कलावंत होय आगे आई ॥
छठवीं रानी प्राणप्यारी । पूजे संत वह लाज निवारी ॥
सतई रानी है सत भामा । निर्भय होय जपै गुरु नामा ॥
अठवीं आनन्दकला है रानी । सतगुरुसों प्रीति निज ठानी ॥
नौवीं रानी नामपियारी । भक्तिवंत जानै संसारी ॥
दशमी रानी है दिल दायक । सब रानीकी सो है नायक ॥
ग्यारहवीं रानी है रंगरोपा । ताके कारन राव नहिं लोपा ॥

बारहवीं रानी सूरजमती । हंस रूप है ताकी गती ॥
द्वादश रानी सब बनि आयी । एक अंग होय सब भक्ति करायी ॥
राजा छडीदार पठवाई । तो वो कुँवर को लाय बुलाई ॥

छडीदार वचन ।

छडीदार कहै कर जोरी । राजकुँवर सुनु विन्ती मोरी ॥
राजा रानि गुरु चरणे आये । ताते तुमको बेगि बुलाये ॥
गरभवाससों करें निरुवारा । तुरत चलो जनि लावो बारा ॥

कुँवर वचन ।

तुम छडिदार कहो बात विचारी । कैसा गुरु है सो अधिकारी ॥
छडीदार वचन ।

हम मति हीन कछू नहिं जाना । निश्चय आही पुरुष पुराना ॥
यह सुपने नाहीं कहूँ देखा । सुर मुनि नारद शारद पेखा ॥

कुँवर वचन ।

कुँवर बीनती कीन सुहाती । सुनतैं बात जुडानी छाती ॥
हंस रूप चारों हैं भाई । उमंग हरष हिये नाहिं समाई ॥
जहाँ सतगुरु आसन कीन्हा । कुँवर चार आइ दर्शन लीन्हा ॥
बडा कुँवर वह सूरजभाना । गुरु स्वरूप हृदय में आना ॥
दूजा कुँवर इन्द्रमन दासा । शब्दै पीवै शब्दकी आसा ॥
तीजै कहिये चतुर्भुज कुमारा । शब्द सुनत वह सीस उतारा ॥
चौथा कुँवर विक्रम दासा । जिन तन मनकी छोडी आसा ॥
चारों कुँवर धरे गुरु पाई । तन मन धन सब प्रीति चढाई ॥
कदलौ केर पतवार धरयी । गज मुक्ताहल चौक पुरायी ॥
नरियल मोरिके मालूम कीन्हा । लिखि परवाना सबकुँ दीन्हा ॥
इतने हंस भये मन भावन । तिनको सतगुरु कीन्हा पावन ॥
तन मन धन सो बदला कीन्हा । शिरके सांठ साहबको चीन्हा ॥
करी निछावर मेटे गर्भफेरा । अब तो भई भगतिकी वेरा ॥

सतगुरु वचन ।

तुमरी राय भली बनि आही । तुम गरभवासकी कौल निबाही ॥
जोई कौल गरभका पालै । ताको सतगुरु होहि दयालै ॥
गरभ कौल कोइ चूके भाई । असंख्य जन्म चौरासी जाई ॥

साखी-गरभ कौल चूके नहीं, वोही हंस सुजान ।

चौरासी भरमें नहीं, सो पहुँचे यहि परमान ॥

राजा वचन-चौपाई ।

राजा कहै दोऊ कर जोरी । सुनु समरथ यह विन्ती मोरी ॥
महाकुकर्मी जो होय प्रानी । करमनसे कैसे होय छुटानी ॥

सतगुरु वचन ।

तब समरथ गुरु शब्द उचारा । करमन काटि कहुँ निरवारा ॥
असंख्यजन्म कर्म किय आयी । पान पान में करम कटायी ॥
जो जिव कर्म करै निरबारा । पाख पाख में कर्म सुधारा ॥
विना पान नहिं कर्म कटाई । कोटिन ज्ञान करै जो भाई ॥
रेखा गुंज विचारै जानी । विना गुंज करै जिव हानी ॥
युग छत्र सो हंस उबारा । छत्र मुनी से उतरे पारा ॥
युग बन्धन ते शिष्य करीजै । असंख्यजन्मका कर्म जो छीजै ॥
जैसा जीव तैसा होय पाना । सबही करम होय छय माना ॥
लगन जैमुनि आवै हाथा । धर्मराय तेहि नावै माथा ॥
गुरुशिष्य युक्ति एक जो आवै । पारसपान छत्र मुनि पावै ॥
पान एकोतर लैहैं जाई । असंख्य जन्मका कर्म नशाई ॥

राजा वचन ।

राजा सतगुरु विनती लायी । लगन जैमुनि देहु बतायी ॥
लगन जैमुनी कैसे पावै । कैसे सतगुरु सों लौ लावै ॥
कौन जुगति चरनामृत लेही । कैसे करै जो बनै बिदेही ॥

कौन वस्तु कहाँ लै आवै । काह भेट गुरु आगे धरावै ॥
लोकलोक गुरु कहो समझायी । कहौ हंस कहँ जाय समायी ॥
कैसे पावै लोक निवासा । कौन कौन घर करिहै वासा ॥

सतगुरु वचन ।

तब सतगुरु अस बचन उचारा । शिष्य होय सौपूँ भंडारा ॥
शिष्य होय सँवारै देही । लोक द्वीपकी गम्य तब लेही ॥
शिष्य होय गुरुवश करलीजै । तन मन धनही नश्वर कीजै ॥
जो कछु आपन भक्ति करावै । पान पान सँग लोक पहुँचावै ॥
ताकी देह बनत है भाई । तामें हंस तब जाय समाई ॥
जोइ वस्तु ध्यानमाँहि चढावै । सोई हंसा सत्यलोक पहुँचावै ॥
ताका नाम रेवती भाई । विना शिष्य कोइ पावै नाई ॥
तन मन धनको नेह न आवे । तब जिव लगन जैमुनी पावै ॥
तब राजा मन हरष अपारी । करहु शिष्य जाऊँ बलिहारी ॥

कुँवर वचन ।

कुँवर कहै विलम्ब किमि साहूँ । दया करो हो शीस उताहूँ ॥

रानी वचन ।

रानी मनमें हर्ष अनन्दा । मानों उगे कोटिक चन्दा ॥
तन मनसे करिहौं गुरु सेवा । हमको शिष्य करहु गुरु देवा ॥
अन्तर बात सब देहु बतायी । जैसे सीप मोती कूँ भाँयी ॥

सतगुरु वचन ।

करनी कठिन सत्य करिजानो । कहनि करनि बहु भेद बखानो ॥
कठिन करनी टले जो भाई । ताकर जीव बहुत दुख पाई ॥
शिष्य होय जब कौल बँधावे । तन मन धन सब आनि चढावे ॥
किये कौल निबाहे पूरा । करे गुरुसेवा शिष्य सोइ शूरा ॥
पूरा होय के शूर कहावे । सतगुरु वचन सदा लौलावे ॥

करी कौल निर्बाहे नाहीं । ऐसो शिष्य सोयम मुख जाहीं ॥
 तन मन चढावे वही सुख पावे । आखिर धन यौवन बहि जावे ॥
 कौल करे सो जाल भुलाई । अँटके भव में नाहि सहाई ॥
 किया कौल टालि जो देई । बहु दुख संकट माथे लेई ॥
 होय दुखी दुख देह समावै । ताकी देह रोग है आवै ॥
 गुरु को दोष देहु जन कोई । आज्ञा मेटे सजा तेहि होई ॥
 सो जिव कदी न उतरे पारा । करन द्वेष जो गुरु से धारा ॥
 अन धन ताकहँ चाहिये भाई । जापर सत गुरु हौहि सहाई ॥
 कर्म सतगुरु दया कटावे । साहब ध्यान सो फल यह पावै ॥
 गुरु छोडि जो कर्म करावे । उन मनमें जो लीन रहावे ॥
 सो नहि पावै वस्तु अपारा । मनमें देखहु करहु विचारा ॥
 सहज भक्ति करो तुम भाई । होय शिष्य नहि डर कछु ताई ॥
 सहज भक्ति राजा तुम करहु । शिष्य होइ भक्ति पद तरहु ॥
 सहज भक्ति सबही सुखदाई । कठिन कमाई दुस्तर भाई ॥
 कठिन कमाई खाँडेकी धारा । सहज भक्तिसे उतरो पारा ॥
 सदा सुखारि भक्ति रस पीजै । सूली ऊपर घर नहि कीजै ॥

राजा वचन ।

सब कर्म कठिनसहज कर जानू । तनमन धन कर लोभन आनू ॥
 हमको सीख अब देउ गुसाई । कौल कहूँ सो चूकूँ नाई ॥
 जो कहूँ चूकि कौल हम जावें । अपनी करनी हम भरि पावें ॥
 कौल चुके सो मूँढ गवारा । विनु स्वारथ जग होवे ख्वारा ॥
 रंकके हाथ रतन जो आवे । कौडी बदले काह गवाँवे ॥
 अब सतगुरु दाया मोहि कीजै । चूके कौलका फलहि कहीजै ॥
 फिर कैसे सो सुख पावै । कैसे वह फिर कौलमें आवे ॥
 कैसे निर्धन धनै बहोरे । कैसे रोगी रोग सो छोरे ॥
 अब करु शिष्य शब्द मुहि दीजै । नहि तो देह त्याग हम कीजै ॥

साखी-चरण वन्दुँ कर जोरिके, सतगुरु सुनो पुकार ।

लगत जैमुनि जब मिले, तबही करब अहार ॥

सतगुरु बचन-चौपाई ।

ऐसे कष्ट करो मत भाई । करो विचार मैं कहूँ सुनाई ॥
 करो आरती साज मँगाओ । लेई पान परम सुख पाओ ॥
 प्रथम सिंहासन लाइ बिछाओ । सर्वजीव एकसुरति होय आओ ॥
 सवा सै पान जीव प्रति लाओ । सवा सेर महाकन्द मँगाओ ॥
 कपडा बस्तर धातु धराओ । ताँबा पीतल बर्तन लाओ ॥
 सोना रूपा मोती हीरा । लाल जवाहिर बने सो चीरा ॥
 जैसो साज जोई लैं आवै । तैसो हंसा देह बनावै ॥
 इतनी साज नहीं बनि आवे । ताके हेतु यह गौ- ठहरावै ॥
 गौ नाम पृथ्वी का होई । पृथ्वी नाम यह देह संजाई ॥
 सोधन चले अग्रकी धारा । अगर वास तहँ होय अपारा ॥
 पान संग सो देउँ पहुँचायी । लोक जात सो बार न आयी ॥
 जब सतगुरु आज्ञा फरमायी । तब राजा सब साज मँगायी ॥
 सबही राज जब आनि धरावा । तब सतगुरुको तख्त बिठावा ॥
 जुगति साजि चरणामृत लीन्हा । तन मन धन अर्पण करदीना ॥
 पुनि सतगुरु पान सो लीना । जैसो जीव तैसो तेहि दीना ॥
 पाइ पान सबही चित दीना । होय अधीन सत्य सुख लीना ॥
 तब सतगुरु यक बचन उचारा । सबहीको कह्यो करन विचारा ॥

सतगुरु बचन ।

सुनु राजा यक कहूँ विचारा । मानो राजा कहा हमारा ॥
 जो वस्तु तुम हम सो पाओ । रखो चेत नहिं अनत गँवाओ ॥
 जुगाओ शब्दै करो कमाई । दृढ करि राखो नहिं देहु गवाँई ॥
 सेवा करत सुरति चलि जायी । तबहि कालघर बजे बधायी ॥
 जे जिव शब्द सुरति पर चाले । सबही विधि सो होय निहाले ॥

साखी-शिष्य होय तनै छिपाइ, ताका कहूँ विचार ।

कहै कबीर निर्भय नहीं, निश्चय यमके द्वार ॥

राजावचन-चौपाई ।

राजा कहै सुनो गुरु मोरा । मैं लागत हूँ चरने तोरा ॥
 सहस अठासी लोक बताओ । भिन्न भिन्न कै मोहि बुझाओ ॥
 कौन हँस कहँ करै बसेरा । सबही हंस कर कहँ २ डेरा ॥
 उत्तर समरथ कहो बुझायी । यह सन्देह उठा मन आयी ॥
 खेमसरी को कहा संदेशा । द्वादश हंस उन सँग उपदेशा ॥
 चारों युगका कहा संदेशा । बहुते हंस बतायो भेशा ॥
 बहुते जीवहि बोध बताये । तन छूटे सब कहाँ समाये ॥
 बहुत हंस पहुँचे निज ठाई । तिनकर पता कह्यो समझाई ॥
 और हंस कहाँको गयऊ । ताका बहुत संदेहा ठयऊ ॥

सतगुरु वचन ।

हे राजा तोहि कहि समझाऊँ । भिन्न २ कै वरनि बताऊँ ॥
 जे जे जीव परवाना पावै । सो सो जीव सत्यलोक सिधावै ॥
 परवाना की यहि अधिकाई । हंस विगोय ना कबहूँ जाई ॥
 जो हंसा नहिं देह बनावै । सो सब मानसरोवर जावै ॥
 मान सरोवर दीप अमाना । होइ है चार भानु परमाना ॥
 परवाना की यह अधिकाई । योनी गरभ बहुरि नहिं आई ॥
 ताते ताहि वृत्तान्त बतायी । सकल कामना तोर मिटायी ॥
 सत्य सत्य सबको समझायी । जब गुरुको चरणामृत पायी ॥
 जो कछु करै सुकृत कमाई । सो सब पान पर देहि चढाई ॥
 हेत द्वीपमें पहुँचे जाई । तबही हंसा देह बसाई ॥
 ऐसी विधि जो पान चढावै । निज स्वरूप जीव सो पावै ॥
 तापर हंस होय असवारा । पचासी पवन परे सरदारा ॥

जो ऐसी नाहीं बनि आवै । ताके पान संग वृषभ चढावै ॥
 वृषभ चढावे पावे सोई । पद्मप दीप रूप बहु होई ॥
 वृषभ नाम नील है भाई । उनकी शोभा बहुतहिं पाई ॥
 नाम नील वरन है स्वेता । ताको रूप कहा कहु केता ॥
 जो वृषभ नहीं बनि आवै । तो लै गौ सो देह बनावै ॥
 गौ देइ सो पान जो पावे । मंजुल करि वह हंस रहावे ॥
 दश हजार सुर झलके देही । पहुँचे हंसा होय विदेही ॥
 हीरा मोती लाल जवहिरा । पान चढे पुनि देह उजिहिरा ॥
 बस्तर दे पुनि पान चढावे । ज्ञान दीपमें लै पहुँचावे ॥
 पांच सौ सूर्य समान स्वरूपा । परसत तहाँ सो होय अनूपा ॥
 कंचन रूपा धातु चढावे । तैसो शोभा देहमों पावै ॥
 कहूँ पुकार करो निर्वेरा । देह विना कहूँ करै बसेरा ॥

राजा वचन ।

धरे राय सतगुरुको पाऊ । हो सतगुरु तुम हंस मुकताऊ ॥
 सत्यगुरु मैं तुव बलि जाऊ । सर्व भेद तुम मोहिं बताऊ ॥
 कछू न मोसे राखु दुराई । देत हौं तुमको पुरुष दुहाई ॥
 जो तुम कहौ करौं मैं सोई । तुमसों दिल पतियाना मोई ॥
 कृपा करो मैं प्रीति लगाऊँ । कसनी देहु सो सकल सहाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

तब सतगुरु कहे समझायी । काहे को तुम देत दुहायी ॥
 सबही कहों तुम पूछो तैसी । लोक राह है सो पुनि जैसी ॥
 गही बाँहि उबारूँ तोहि राई । यहि हंसन की अहै कमाई ॥
 जो तुम किरिया दीन्हा मोई । कछू न तुम सों राखूँ गोई ॥
 यह कहि सतगुरु युगति बनाया । ले राजाको अंक मिलाया ॥
 अंक मिला कटी सब माया । पारस रूप भई जो काया ॥

अंक मिलाया भये नृप पारस । उघड़ी दृष्टि अधिक भै आरस ॥
लोक द्वीप दृष्टि में आई । भिन्न भिन्न सब द्वीप दिखाई ॥
भये राजा मन महा अनन्दा । मानो ऊँगे पूरण चन्दा ॥

राजा वचन ।

धन सतगुरु तुम्हरी बलिहारी । बूडत जीवतुम लीन्ह उबारी ॥
अब सतगुरु प्रसाद कछु कीजै । महा प्रसाद जीवनको दीजै ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै सुनो तुम राई । महा प्रसादकी जुगति बताई ॥
कंचन केरी थार मँगाओ । अमृतकी झारी भर लाओ ॥
आसन डारिके पुरुष बैठाओ । स्वेत बहुत सब हंस ले आओ ॥
इतना करि तब चरण खटारो । होय अधीन तब मनको मारो ॥
सुनि राजा सब युक्ती लीन्हा । सतगुरुको बहु बन्दन कीन्हा ॥
चरणखटारि पोंछि जब लियऊ । आसनबिठाय पुरुष कहँ दियऊ ॥
तब सतगुरु अस करबे लीना । सीथ प्रसाद सबनकू दीना ॥
वाय प्रसाद भये बड भागा । शून्य महल मन मोहरा जागा ॥
कहै समरथ कहु कैसा स्वादा । कहत बनै नहिं बनत अघादा ॥
साखी-महाप्रसाद के करतही, निःतत्त्व होय जाय ।

रंचक घट में संचरे, सतगुरु लोक दिखाय ॥

राजावचन-चौपाई ।

सतगुरु कहिये बात विशेखा । लोक द्वीप सबही हम देखा ॥
धन्य सतगुरु तुम्हरे बलि जाऊँ । लोक द्वीप सब दृष्टिहि पाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

चौका युक्ती नहीं बनि आवै । महा प्रसाद कै देह बनावै ॥
तुमसे राजा कहु समझायी । पाख मास में पानतुम पायी ॥
पुरुष पान सो पावे जबहीं । अगम ज्ञान सो सूझे तबहीं ॥

यही ज्ञान मैं भेद समझायी । तुम हंसन से कहो बुझायी ॥
 हमारो प्रतिहार पान है भाई । पलपल खबर हंसकी लाई ॥
 सोई वस्तु लै लोक पहुँचावे । सोई पान संग हंसन आवे ॥
 जाका तुमसे कहूँ विचारा । पान लहे सो हंस हमारा ॥
 जैमुनि लगन पान जो पावे । निर्भय लोक हमारे आवे ॥
 पान परख विन झूठ कडिहारा । धोखे लेइ जिवन कर भारा ॥
 धर्मराय माँगि है पाना । जबही हंसा करे निर्बाना ॥
 साखी-सबही पहुँचे लोकमें, चढै पानपर अंक ।

कटे कर्म सब जन्मके, हंस होय निःशंक ॥

हंस (राजा) वचन-चौपाई ।

हंस कहे सुनो गुरुदेवा । जीवकि अवधि बताओ भेवा ॥
 जादिन अंत अवस्था आवे । ताकर भेद हंस किमि पावे ॥
 सोम शुक्र औ बुधवारा । ताका कहिये चन्द सरदारा ॥
 आपनि आपनि चौकी आवै । तौ यह जीव बहुत सुख पावै ॥
 चलै चूक चौकी कर फेरा । तौ कायानगरमें होय बखेरा ॥
 गुरुबारका भेद बताऊँ । दो भावै गुरु दरस दिखाऊँ ॥
 एकै आवै एक न आवै । ता दिन जीव बहुत दुख पावै ॥
 बार तिथि चौकी चूक करेही । तो निश्चय ना बाचै देही ॥
 सरब भेद मैं तोहि बताया । विरले हंस भेद यह पाया ॥
 तुम सों हंस कहूँ समझायी । गुप्त भेद ना बाहिर जायी ॥
 अब हम पृथ्वी परिक्रमा जावैं । भूले हंसन करें चितावैं ॥
 तुम राजा बैठि राज कराओ । सार शब्द जपन चित लाओ ॥

राजा वचन ।

जब सतगुरुतहँ ऐसो कहिया । तब राजा मन चिंता भइया ॥
 राजा चरण धरयो तब आई । तुम बिनु कैसे रहूँ गुसाई ॥
 हमको राखो चरण लगायी । नहिं तो देहु सत्यलोक पठायी ॥

करक संक्रान्ति चन्द्रकी भाई । जल तत्त्व ते चन्द कहाई ॥
जब चन्दा घर चन्दा सोई । रोग व्याधि शोक ना होई ॥
चन्द पेलिके सूर समावै । पास छः में लोकहिं जावे ॥
अब पाँच तत्त्वका कहूँ बखाना । जानेगा कोइ हंस सुजाना ॥
परबत पंच काया के बौरै । गुरु गम हंसा करै विचारै ॥
पीत वरन है मन्दिर बारा । तामें पुरुष दरश गुरु सारा ॥
स्वेत वरन है पुरुष परमाना । ताका दरश करै कोइ स्याना ॥
तीजे लालवरन पुरुष परमाना । देखत हैं सो हंस सुजाना ॥
चौथा हरा रंग है मूरत । ताको ध्यान धरि देखिये मूरत ॥
पाँचवें स्याम वरन अधिकारा । सो देखै कोइ हंसा प्यारा ॥
जो कोइ इनसूँ सुरति लगावै । स्वास स्वासकी खबर बतावै ॥
रवि मंगल शनिश्चर वारा । तापर सूर होय असंवारा ॥

कालज्ञान ।

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै सुनो रे भाई । अगम के भेद कहूँ समझाई ॥
भिन्न भिन्न करके भेद बताऊँ । अगम कहिके दृष्टि दिखाऊँ ॥
वर्ष छः मास मासका भाऊँ । पाख आठदिन बरनि सुनाऊँ ॥
इंगला पिंगला सुषुमनि नारी । चलै लगन सो लेहु विचारी ॥
पाँच तत्त्व हैं उनके पासा । वह सब आगम कहें तमासा ॥
स्याना हंस होय जो भाई । तिनको अगम देहु बताई ॥
छः मासका भेद बताऊँ । अगम लहो सो कहि समझाऊँ ॥
दोय संक्रान्तिका भेद बतायी । एक मकर दूजा करक कहायी ॥
मकर संक्रान्ति सूरज सो देखा । तत्त्व पृथ्वी स्वर सूर विशेषा ॥
जो सूर घर सूरज आवे । छः मास काया सुख पावे ॥
सूरज पेलि चन्द जो आवे । छः मासमें जीव चलावे ॥

पल पल राय नवावै माथा । मोको कैसे छुडाओ साथ ॥
गुरु विन कैसे रहौं अकेला । दिग दिग होये जीव न चेला ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै सुनो मोर भाई । हम संग रहो लै जाउँ लिवाई ॥
सदा रहौ हंसन के पासा । हमको रहे हंसनकी आसा ॥
देह सो दर्शन तुम्हें दिय राई । विदेही होय संग रहूँ सहाई ॥
विदेही दरश जब हंस पावे । देखि दरश होय अधिक उछावे ॥
सतगुरु चलन खबर सब पावा । धीरे धीरे सब हंसा आवा ॥
आये हंसा विन्ती करहीं । हे साहब हम धीर कस धरहीं ॥
जो तुम जाओ सतगुरु साहब । हमहु संग सब तुम्हरे आयब ॥
तुम विनु गुरु कैसे रहि जावै । जल विनु मच्छी ज्यों तडपावै ॥
हम पाये आनंद दरश तुम्हारे । मोको न छोडो स्वामि हमारे ॥

सतगुरु वचन ।

काहे को हठ करत हौ भाई । सबही हंस सुनो चित लाई ॥
देह धरी अब करो सुख वासा । सदा रखो निजनामकी आसा ॥
घर में रहि कुल धर्म निबाहो । जो सब साँचि भक्ति तुम चाहो ॥

सब हंस वचन ।

माता पिता त्रिया नहिं चहिये । सुत नारीसे नहिं नेह लगैये ॥
सतगुरु तुमही हौ यक साँचा । झूठा और सकल जग काचा ॥
विना दर्श सो दुख हम पावें । नित चरणामृत कहँसे लावें ॥
तुम विनु देह छूटि सो जावै । कहँ गुरुवचन बहुरि सो पावे ॥
विना दरश सब जगकी माया । सबहि छुटे नहिं चहिये काया ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै सुनो रे भाई । सबही रहो नाम लौ लायी ॥
सदा रहूँ मैं उनके पासा । धरे ध्यान जो साँचकी आसा ॥

सुनो हंस गहो पद सांची । ध्यान विदेह में रहि हो रांची ॥
 इतना कहि सतगुरु बतलावा । सबको विदेह ध्यान समझावा ॥
 ध्यान पाइ आनन्द सबै भयऊ । सतगुरु दरश प्रत्यक्षहि पयऊ ॥
 फिर सतगुरु राजहिं समझावा । सब हंसन को करहु चितावा ॥
 पुनि हंसनसे अस प्रभु भारूयो । हमरे ठौर राय तुहि राख्यो ॥
 हम सम राय को सबही जानो । हमसन राय को अन्त न मानो ॥
 तब सतगुरु तहँ ते पगुधारा । सब हंसन दुख भयो अपारा ॥
 चलत गुरू सब सीस नवाया । करि मिलाप गुरु कण्ठ लगाया ॥
 तुम सों राजा कहू चितायी । रहो सदा शब्द लवलायी ॥
 चले गुरु समरथ जेही बारा । रोवै हंस बहैं जल धारा ॥
 जैसे रंकहि रतन हिराना । जैसे भुजंग मणी विसराना ॥
 मानि सतगुरु आज्ञा लीना । विदेह ध्यान गुरु दशन दीना ॥
 ध्यान पाइ गुरु कैर सब भक्ती । काल नाल सब छूटी युक्ती ॥
 केते दिवस ऐसे चलि गयऊ । तबहीं राजा आगम पयऊ ॥
 सब हंसनको वेगि बुलायी । राजा कहै शब्द बतलायी ॥

राजा वचन ।

जेहि कारण हम भक्ति कराई । सो दिन अब पहुँचा है आई ॥
 ताल पखावज वेगि लै आओ । शब्द चलावा मंगल गाओ ॥
 बाजा बाजे बहुत बधायी । सबै त्रिया मिलि मंगलगायी ॥
 सबही लोक खबर यह पायी । राय जगजीवन लोक सिधायी ॥
 पाटन नगर में बहुत उछावा । घर घर तिरिया कैर बधावा ॥
 बैठे राजा आसन धारी । जुरे हंस जहँ बहुत अपारी ॥
 ले परवाना बन्दगी कीना । सबही हंस परिकरमा दीना ॥
 रानी पांच कुँवर दौय जाना । ❀ दासी चार हजूरी साना ॥

❀ इसके विरुद्ध दूसरी पुस्तकोंमें इस प्रकार लिखा है ।

जब राजा यक शब्द उचारा । कौन कौन चलै हमारे लारा ॥—

चार प्रधान सात उमराऊ । प्रोहित दोय हियै मन भाऊ ॥
 इतना जन परवाना लीना । राजा संग सो प्याना कीना ॥
 पावत बीरा जिव निस्तारेऊ । अमर लोक कहँ प्याना धारेऊ ॥
 दशम द्वार सो न्यारा द्वारा । जेही राह हँस पगु धारा ॥
 धन्य भाग हंसन तब जाना । राजाके संग कीन प्याना ॥
 आये प्रथम धरम के डेरा । जहँ चौतरा रायधरम केरा ॥
 धर्मराय जब लेखा मांगा । तब हंसा लेखा देने लागा ॥
 जिन जिन कौल चुकाने भाई । सो सो रहै धर्मकी ठाई ॥
 जीववचन धर्मराय प्रति ।

जीव कहे सुनो धर्मराया । हम सतगुरुका परवाना पाया ॥
 ज्ञान ध्यान हम बहुते जाने । और जाने अमर सो ज्ञाने ॥
 हमको तुम काहे रोकत भाई । संगी हमारे आगे चले जाई ॥
 धर्मराय वचन ।

भूला जीव मुख करे चतुरायी । ऐसी बातन मुक्ति न पायी ॥
 साखी गावे सब संसारा । का सबही जिव उतरे पारा ॥
 जो जीव होएँ कौलके साचा । तिन सबपर हम पाले बाचा ॥
 सतगुरु सेवा कीन बनायी । हमरे शिरसु पावँ धरि जायी ॥
 भक्ति हीन छुए अंग हमारा । छूवउ अंग होय जरि छारा ॥

—तब इतने हंस आगे पगुधारा । संग जान को कीन विचार ॥
 रानी पांच कुँवर दोय जानी । दासी अष्ट नव हजुरी सानी ॥
 पांच प्रधान ग्यारह उमराओ । छडीदार सात सो मन लाओ ॥
 बारह कायस्थ सत्रह साहूकारा । बढई चार अरु सात लुहारा ॥
 सत्रह सुनार अठारह बनजारा । चौकीदार चले संग चारा ॥
 नव कुरमी सत्रह कोरी । तेरह कुम्हार सबै सर मोरी ॥
 धोबी उजला धोवन हारा । पांच चले राजा की लारा ॥
 छः चमार बन्दगी कीना । राजा के संग प्याना दीना ॥
 पाये बीरा जीव चलावा । निकसा जीव ठाठरी पढावा ॥

चार सहस्र सै सात रु बावन । इतना जिय चलु लोकहिं ठावन ॥
 दोसै कौल चुकाने भाई । सो रहे धर्म राय की ठाई ॥
 चार हजार सात सै बावन । दोय सै धरमराज ठहरावन ॥
 चार हजार बावन सै पाँचा । मानसरोवर पहुँचो सो साँचा ॥
 जहाँ कामिनी मंगल गावै । सजि आरति ले आगे आवै ॥

कामिनी वचन ।

करी निछावर बूझै बाता । कैसे आये यहि मग धाता ॥
 माया मोह बन्ध्यो संसारा । कैसे छोडे कुल परिवार ॥

हंस वचन ।

कहे हंस सतगुरु गम दीन्हा । जब हम दर्शन तुम्हारा लीन्हा ॥
 देह बनी सो आगे आये । रहिता सब जिव वहाँ रहाये ॥
 चार हजार एकसौ बावन । एते हंस तेहीं ठावन ॥
 चार सौ आगे किया पयाना । हेतु द्वीप पहुँचे अस्थाना ॥
 मान सरोवर हंस रहायी । सब मिलि करहिं बहुत बघायी ॥
 सब पूछे कामिनि सों बाता । यह सब हंस कदां को जाता ॥

कामिनी वचन ।

कह कामिनि सुनु हंसा भाई । तुम गुरु कर कह कीन कमाई ॥
 परवाना की यहै बडावा । सो तुम मानसरोवर आवा ॥
 उन हंसन गुरु भक्ति करायी । जुगति जुगति उन देह बनायी ॥
 आगे हेत द्वीप में जैहैं । हंस सुजन जन कंठ लगैहैं ॥

हंस वचन ।

सब हंसा मिलि विनती कीन्हा । हम चाहें तुव दर्शन लीन्हा ॥
 साखी-बैठि हँस विन्ती करे, सुनु समरथ अरदास ।
 देही सवारे लोकमें, उपजे प्रेम विलास ॥

चौपाई—सुजनजन वचन ।

हंस सुजन जन कहैं सुनायी । सबही हंसा सुनो चितलायी ॥
जैसी देह सवारी हंसा । तैसी लेहु हमारे पंसा ॥

हंस वचन ।

चरणामृतहि तुत सो लीना । कैसी महिमा गुरु की कीना ॥
हंस सुजनजन वचन ।

कितने पान शिष होये पायी । कौन वस्तु तुम पान चढायी ॥
जैसि वस्तु संसार चढावै । वैसी देह इहाँ सो पावै ॥
इहाँ मोती वहाँ हीरा लैहो । तेहि सम रूप देह सो पैहो ॥
जैसी सवारे देह तुम दासा । वैसे लोक करो तुम वासा ॥
जिन वहि अवसर देह बनायी । मँजुल करी में बैठक पाई ॥
द्वादश सहस सुर हँसनकोरूपा । बैठे हंस दीप सम भूपा ॥
गौ चढाय पान जिन लीन्हा । पुहुप दीप तिन हंसा चीन्हा ॥
आठ हजार सुरज परकासू । सब आनन्द होय सुख बासू ॥
वृषभ चढाय पान जो पावे । मंजु लोकमहँ हंस सो जावे ॥
दश सहस सूर छवि छाजे । बैठे हंसा राज विराजे ॥
हीरा मोती लै पान जो पावे । उदय द्वीप में हंसा जावै ॥
तेहि हंस में सुरज की जोती । झलके रोम में जैसे मोती ॥
वस्तर देइकै देह बनावे । सो हंसा सुख सागर पावै ॥
वह तो ज्ञान द्वीप में जावें । चार सुरज ज्योति तिन पावें ॥
पैसा धातू बर्तन लायी । सुखसागरमें ध्यान लगायी ॥
पैहें सो षोडश भानु सरूपा । बसै सो हंसा द्वीप समीपा ॥
तीन सै बत्तिस जिनदेह बनाये । आपन आपन द्वीप सिधाये ॥
पैसठ हंस पहुंचे निज ठाई । जिन तो इलम फकीरी पाई ॥
कहै सुजन जन सुनो रे भाई । धनि धनि तुमरी अधिक कमाई ॥
तुम्हरी सरवर कोउ न कीन्हा । तुमतो गुरुको वश कर लीन्हा ॥

तन मन धनकी कौन चलायी । तुम तो आपा दिय बिसरायी ॥
 इन सब हंसन देह बनायी । तुम तो देही गुन बिसरायी ॥
 जो तुम कहो करौं मैं सोई । तुमरी सरवर नाहीं कोई ॥
 सुरति तुम्हारी अधिक सहाई । सतगुरु तुमरे प्राण समायी ॥
 यह वस्तु तुम कैसे चीन्हा । कैसे गुरुको वश करि लीन्हा ॥
 कैसे तन आशा बिसरायी । कैसे इल्म फकीरी पायी ॥
 सब हंसनकी देह बनाऊँ । ताको तैसो दीप मिलाऊँ ॥
 सतगुरु वशि करि राखे पासा । सुनो हंस मुँहि तुमरी आशा ॥
 सदा सतगुरु हंस सनेही । तुम अर्पित सतगुरुकी देही ॥
 सदा करै सतगुरु की पूजा । तुमसा हंस न देखा दूजा ॥

हंस वचन ।

हंस कहे सुन पुरुष पुराना । हम कहँ जानै जीव अजाना ॥
 हम तो हते भवजल के माहीं । महा अन्ध कछु सूझत नाहीं ॥
 तब समरथ गुरुआनि चिताया । बूडत देखि उबारन आया ॥
 जो गुरु कहा सोई हम कीन्हा । एक गुरु विनु और न चीन्हा ॥
 तिनसों पूछ कीन कर जोरी । समरथ मानो विन्ती मोरी ॥
 हम नहिं चाहें लोक औ द्वीपा । सदा रहैं गुरु चरण समीपा ॥
 तब गुरु कह्यो सुनो रे भाई । सर्व ज्ञान का मूल बताई ॥
 हमरे संग रहा जो चाहो । नौतम सुरति कि देह बनाओ ॥
 और सकल झूठ कर जानो । एक गुरु हम सांचे मानो ॥
 तन मन धन सो बदला कीना । तब गुरु इल्म फकीरी दीना ॥
 तब गुरु आपा दिया मिटायी । देहीको गुण दियो बिसरायी ॥
 पान इकोत्तर सै हम पाये । पान पान हम देह बनाये ॥
 लोक द्वीप हम कछु न चाहा । हमको सतगुरु दरशकि लाहा ॥
 हंसा सुरति गुरुकी कीन्हा । स्वरूप सहित गुरुदर्शन दीन्हा ॥
 सबही हंस धरेउ गुरु पाऊ । करि बन्दगि सब सीस नवाऊ ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै हंस सुनु बाता । कहां वे जीव तुम्हारे साथ ॥
हंस सुजनजन वचन ।

हंस सुजन मिलि अंक लगाये । कहो हंस कस कीन कमाये ॥
सतगुरु वचन ।

इनकी मैं का करूं बडाई । ये तो सब निज हंसा आई ॥
निश्चय बात हमारी मानी । काया माया खाकै जानी ॥
सतगुरु हंसको लोक चढायी । सहस अठासी द्वीप दिखायी ॥
जेहि जेहि हंस सवारी काया । द्वीप द्वीप सब दृष्टि बताया ॥
देखो हंस कह सब अस्थाना । देखो द्वीप सबही मन माना ॥
सबहीं हंस करे पछतावा । यह गति हम वहां नाहीं पावा ॥
लै हंसनको पहुँचे तहँवा । महापुरुष विराजे जहँवा ॥
साखी-द्वीप वर्नन कह कहौं, सबें मनोरथ काज ।

सब द्वीपनते न्यार है, सत्यपुरुष को राज ॥

चौपाई ।

जब हंसनको ले पहुँचाये । तब सतपुरुष उठि कंठ लगाये ॥
जब ही पुरुष अंक भरि लीना । पारस देह सब हंसन कीना ॥

पुरुष वचन ।

कहै पुरुष ज्ञानी भल आये । इतने हंस कवन विधि लाये ॥
ज्ञानी वचन ।

ये तब जानो पुरुष पुराना । मैं केहि मुख सों करौं बखाना ॥
चार हजार सातसों बावन पाये । एते हंस दरश तुव आये ॥
सबही आये लोक मँझारा । दुइ सै रोके धरम बटपारा ॥
कौल किया पुनि गये भुलायी । पांजी द्वार धरम पर जायी ॥
मान सरोवर केते रहाये । उनको देही नाहि बनाये ॥

और द्वीपन सब कीन बसारा । जैसी हंसन देह सँवारा ॥
 इन तन मन सो बदला कीना । शिष्य होय इन वस्तुहि लीना ॥
 जो सब सुना है ग्रन्थन नामा । सोई सब कीना इन कामा ॥
 एकोत्तरसै पान इन पावा । नौ तम सुरती देह बनावा ॥
 नेह कीन घर रहै जग मारी । काया के गुण दिया बिसारी ॥
 कसनी कसि सो तन बदले चीन्हा । गुरुको इन सब वश करि लीन्हा ॥
 जीवत मृतक होय रहे जगमाहीं । जासे दरस तुम्हारा पाहीं ॥
 सुनिके पुरुष हरष बहु कीना । फिर फिर हंस अंक भर लीना ॥
 कहा देउ तोहि हंस बडाई । तुम तोको अमर लोक चलि आई ॥
 अरध सिंहासन आसन पाये । सब हंसन शिर छत्र धराये ॥
 हर्षित बदन औ बहुत हुलासा । सदा रहो तुम हमरे पासा ॥
 बैठ्यो महा पुरुष दरबारा । कोटिन सूर हंस उजियारा ॥
 अमृत फलका करो अहारा । धन्य हंस बडभाग तुम्हारा ॥

पुरुष वचन—ज्ञानीप्राप्ति ।

ज्ञानी फेर जाओ संसारा । पृथ्वी जाय करो विस्तारा ॥
 सबसों कहियो यहि उपदेशा । सबही चलो पुरुषके देशा ॥
 साखी—कहै कबीर सुख अति घनो, पूरण प्रेम विलास ।

यह सब जीव चितावनि, जगजीवन परकाश ॥

इति श्रीबोधसागरांतर्गत जगजीवनबोध-

नामक पंचमस्तरंगः समाप्तः ।

श्रीग्रन्थ जगजीवनबोध समाप्त ।

परिशिष्ट भाग ।

ग्रन्थसार ।

संसारमें जन्म लेनाही दुःखके महासागरमें पडना है । जन्मही शोकका सागर और भयका पहाड है जन्मही अनेक कर्मोंका घर,

घातककी खान और कालके दुःख देनेका स्थान है । जन्म कुविद्या का फल, लोभका कमल और ज्ञानका आवरण है । जन्म ही जीवका बन्धन, मृत्युका कारण और अन्त जंजालोंक मूल है । जन्म ही सांचे सुखका छल, चिंताका जंगल और वासनाओंका विस्तार है । जीवकी मिथ्या दशा, कल्पना का भण्डार और ममतारूपी डाकिनीका लीलास्थान जन्म ही है । मायाकी लीलाकी रंगभूमि, तमोगुणकी गहरी और भयानक कूप और जीवको मोक्षमार्गसे भटकानेका जड जन्म ही है । जीवको मिथ्या देहाभिमानमें फँसाकर सत्य पदसे भ्रष्ट कर कालके नाना पाशोंमें फसानेवाला जन्मके सिवाय दूसरा कौन है ? यदि जन्म न हो तो शरीरकी झूठी ममतामें पडाहुआ यह जीव मिथ्या विषय-वासनामें लगकर अपने सत्य ज्ञानस्वरूपको भूलकर मिथ्या आशा और झूठी तृष्णामें फँसकर क्यों कालका चारा बने ? यदि जीव शरीरके साथ सम्बद्ध न होता तो इसे नानाप्रकारकी विपत्ति और संकटमें पडकर दुःख उठानेकी क्या आवश्यकता थी ? जन्म लेनेवाले शरीरका मूल विचार करनेपर इस शरीर ऐसी अपवित्र वस्तु कोई भी नहीं मिलती । रजोदर्शनवाली स्त्रीके मांसिकस्त्रावके पश्चात् बचे हुए और पिताके शरीरसे निकले हुए अपवित्र वीर्यद्वारा इस शरीरकी उत्पत्ति है । जब ऐसी अपवित्र वस्तुओंके संयोगसे यह शरीर बना है तब इसमें पवित्रताका कहाँ पता है । स्त्रीके रक्तके औटाने पर इस शरीरका लोथडा बनता है । यद्यपि ऊपरसे देखनेमें अपवित्र जनोंको यह सुन्दर देख पडता है तथापि भीतर तो वैसेही घृणित नरकका थैला बना हुआ है, फिर यह शरीर कैसा देख पडता है, जैसे चमड़े भिगोनेका चमारका कुण्ड हो । चमारका कुण्ड तो धोनेसे शुद्ध भी हो जाता है,

किन्तु इसे नित्य प्रति धोने पर भी न इसकी दुर्गन्धि जाती है न इसमें पवित्रता आती है ।

हड्डियोंकी ठठरी बनाकर उसमें नस और नाड़ियोंका बन्धन लगाया है और मेद और मांससे इसे जोड़ा है, जिस लोहूका नाम ही अशुद्ध है उसी रक्तसे इस शरीरकी जब बनावट है तब इसकी पवित्रताका क्या ठिकाना है ? शरीर दुर्गन्धिसे भरा है क्योंकि अन्दर बाहर मलिन वस्तुओंसे ही इसकी बनावट हुई है । समस्त शरीरमें शिर सबसे श्रेष्ठ कहा जाता है, किन्तु उसमेंभी नाकमेंसे सदा दुर्गन्धि बहा करती है और कान पकने-पर ऐसी दुर्गन्धि निकलती है कि, निकट भी खड़ा नहीं रहा जाता । आंखमेंसे कीचड़ और मुँहमेंसे थूक, लार और दुर्गन्धि निकला करती है । इस प्रकारसे समस्त शरीर अपवित्र और मलिन वस्तुओंसे बना हुआ है ।

उत्तमसे उत्तम पदार्थ भी भोजन कर लेनेपर वह कई घण्टोंही में घृणित मल बन जाता है । निर्मल शुद्ध जल पीनेसे शरीरके संयोगद्वारा वह मूत्र हो जाता है और इन्हीं पदार्थोंसे शरीरका पोषण भी होता है, राजासे प्रजातक महान् भक्त, राजासे महान् पापी अधकर्मोंतक सबके पेटमें ये अपवित्र पदार्थ भरे हुए हैं और इन अपवित्र पदार्थोंका शरीरसे ऐसा सम्बन्ध है कि यदि कोई इन मलोंको शरीरसे निकाल कर शरीर को शुद्ध करना चाहे तो तुरत ही प्राणी मृत्युको प्राप्त होवे । जिस समयमें यह जीव अपनी वासनाके अनुसार शरीर धारण कर माताके गर्भमें प्रवेश करता है और नव महीनेतक यह शरीर माताके उदरमें रहता है, उसमें नाक मुँह आदि नवों दर्वाजे बन्द होते हैं और जिस समय वायुका तो प्रवेश भी नहीं होता,

उस समय में माता के शरीर से जो अपवित्र रक्त निकलता है उसकी गर्मी द्वारा हड्डी और मांस जलता है । ऊपरसे चमड़ेकी थैली न होने के कारण बालकका मांसमय शरीर माताके तीखे चरपरे आदि पदार्थोंके सेवनसे महान कष्टित होता है । गर्भके ऊपर एक सपेद २ चमड़ा लपेटा होता है और गर्भ मलमूत्र के नरक कुण्डके निकटही होता है तथा उसकी नाभिमें एक नली लगी होती है जिसके द्वारा गर्भका पोषण होता है । वात पित्त तथा विष्टा आदि अनेक अपवित्र पदार्थोंसे और नाना प्रकारके पेट-के कीड़ोंके नाक तथा मुँहके पास फिरनेपर बालकका मन घबराता है । इस प्रकारसे अनेक असंख्य कष्टमें नव महीनातक कैद हुये जीवको अत्यन्त कष्ट और दुःखके कारण इसे प्रभु सद्गुरुका स्मरण आता है तब उस समय अत्यन्त विनीत भावसे प्रार्थना करता है कि, “हे सद्गुरु ! हे परमात्मन् ! यदि इसबार कृपा करके मुझे इस कष्टमें से छुटकारा दे तौ मैं अपने आत्माके कल्याणके मार्गको धारण कर फिरसे ऐसे कष्ट में आने से छुटकारा कर लूंगा ” इसही प्रकार से अनेक समयतक प्रार्थना करते करते प्रभुकी कृपासे समय पूरा होनेपर माताके पेट में पीडा आरम्भ होती है । उस समयमें मुँह नाक और मस्तिष्क जो श्वासके मार्ग हैं मांसके टुकड़ों से एकदम बन्द होजाते हैं, श्वासोच्छासका द्वार बन्द होते ही बालकको मूर्छा आती है और जीव अचेतनावस्थामें तडफडाने लगता है । तडफडानेमें यदि शरीर आडा टेढा हुआ तब बाहरवाले लोग गर्भ को काटकर निकालने की सम्मति देते हैं । यदि किसी युक्तिसे ठीक हुआ तो हुआ नहीं तो हाथ डाल कर बालकका जोई अंग हाथ आया उसीको काटना आरम्भ करते हैं और क्रमशः काटकर उसे बाहर निकलाते हैं । बहुत बार ऐसा होता है कि, स्वयम् बालक तो मरताही है उसके साथ २

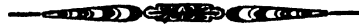
माताका भी प्राण नाश होता है । यदि पूर्व पुण्यकी सहायतासे शरीर सीधाही बाहर निकला तब प्रथम शिर बाहर आता है, मार्ग छोटा होनेसे धाई शिरको पकडकर बल पूर्वक बाहर खींचती है इसमें भी कभी २ ऐसा होता है कि, शिर बाहर निकला और धड उसमेंही अटक जाता है । उस दशामें बालककी मृत्यु होती है और संयोगसे माता बचगयी तो बालक के शरीर को काटकर बाहर निकालते हैं । यदि पुण्यवश सकल शरीर बाहर निकल आया और बालक जीता जागता रहा तो बाहर आतेही बाहर के पवन लगने से बालक को इतना कष्ट होता है कि, मानो सहस्र बिच्छुवोंने एकसाथही डंक मारा है ऐसे असह्य कष्ट के कारण कभी २ बालक अचेत हो जाता है तब उसको चेत दिलाने के लिये नाना प्रकारके उपाय किये जाते हैं । कभी बालक को च्यूटी काट कर जगाते हैं और कभी २ शस्त्रका प्रयोग भी करना पड़ता है । और जब बालक रोता है तब सबको आनन्द आता है इस प्रकार से महान कष्ट भोग कर यह जीव जब बाहर निकल कर संसारके पदार्थों को देखता है और नाना प्रकार के मोहमें फँसानेवाली माया के जाल माता पिता आदि की प्यारी प्यारी बातोंको सुनता है तब गर्भ के कष्ट और प्रार्थना तथा वचन को भूलकर मोह माया में फँसता है और जगतके नाना प्रकार के क्षणिक सुख और दुःखमें पड़ा हुआ यह, साहिब और अपने स्वरूप को भूलकर भी कभी याद नहीं करता । इस प्रकार का गर्भका दुःख सर्व प्राणीको होता है, वही कथा इस ग्रन्थ में जगजीवन (जीव) के बहाने से ग्रन्थकारने लिखकर सबको उपदेश दिया है ॥



भारतपाथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित ।

श्री-गरुडबोध ।



खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष "श्रीवैकटेश्वर" स्टीम-प्रेस,

बम्बई.

संवत् १९९३ शके १८५८.

सत्य नाम ।



श्री कबीर साहिब ।



श्रीसद्गुरुभ्यो नमः ।

अथ श्रीबोधसागरे

षष्ठस्तरंगः ।

ग्रन्थ गरुडबोध ।

सोरठा-गुण गण जेहि अशेष, बने न वर्णत सहसमुख ।
वंदौ सोइ हंसेश, सत्यकबीर जो प्रगट जग ॥
धर्मदास वचन ।

साखी-धरमदास विन्ती करै, सुनहू जगत उधार ।
गरुड बोधको भेव सो, अब कहहू यहि वार ॥
सतगुरु वचन ।

सत गुरु कहन तबहिं अस लागे । गरुड सो ज्ञान जेहिविधिपागे ॥
सत्य पुरुष वचन ।

आप पुरुष यक शब्द उचारा । हो सुकृत तुम जाहु संसारा ॥
नाम पान तुम लेहु हमारा । जाय छुडायहु जिव संसारा ॥
सत्य लोक ते करहू प्यानी । लेहु शब्द तुम बहुविधि बानी ॥
लेहु शब्द अजरमनि ज्ञानी । सत्य शब्द बोलहु सहिदानी ॥
आज्ञा मानि हमारी लेहू । जाय पाँव पृथ्वी तुम देहू ॥
कहो सबन सों शब्द बुझायी । भक्ति प्रताप सत्तनाम सहायी ॥
ज्ञानी वचन ।

तब ज्ञानी उठि मस्तक नावा । तुव प्रताप हम हंस छुडावा ॥
जुगन जुगन में हमहिं सिधाये । जिन माना तिनही मुकुताये ॥

तब साहब मोहि दाया कीन्हा । बचन मानि हम शिरपर लीन्हा ॥
 करि प्रणाम परदक्षिन कीन्हा । पाछे जगहिं पयाना दीन्हा ॥
 यही भाँति धर्मनि जग आवा । बहुत भाँतिते जिव समझावा ॥
 प्रथम गरुडसे भेंट जब भयऊ । सत्य नाम कह बोल सुनयऊ ॥
 धर्मदास सुनु कह्यो बुझयी । जेहि विधिसे ताही समझायी ॥

गरुड वचन ।

शीश नाइ तिन पूछा भाये । हौ तुम कौन कहाँसे आये ॥
 कौन दिशा ते तुम चलि आऊ । अपनो नाम कही समझाऊ ॥

ज्ञानी वचन ।

कह ज्ञानी है नाम हमारा । दीक्षा देन आयउ संसारा ॥
 सत्यलोक से हम चलि आये । जीव छुडावन जग महँ आये ॥
 सत्यपुरुष मोहि आज्ञा दीन्हा । सत्यशब्द हम लेइ तब लीन्हा ॥

गरुड वचन ।

सुनत गरुड अचम्भो माना । सत्य पुरुष आही को आना ॥
 प्रत्यक्ष देव कृष्ण कहावें । दश औतार सो धरि धरि आवें ॥

ज्ञानी वचन ।

तब हम कहा सुनहु तुम स्याना । सत्य पुरुष तुम नहिं पहिचाना ॥
 अवतारन का कहो विचारा । इतने साहिब रहै नियारा ॥
 जाकर कीन्ह सकल विस्तारा । सो साहब नहिं जग औतारा ॥
 योनी संकट वह नहिं आवे । वह तो साहब अछय रहावे ॥
 जहाँ लगे जो जगमें आये । तहाँ लगि सबही अंश कहाये ॥
 साखी-ताते साहब अछय है, तीन लोक सों न्यार ।

योनि संकट ना आवई, ना वह लेइ औतार ॥

गरुड वचन-चौपाई ।

तबही गरुड जो बोलहिं बानी । कौने देश बसत है ज्ञानी ॥
 हम बाहन हैं कृष्ण के भाई । तिनकी गति तुमहूँ नहिं पाई ॥

तीनि लोकके ठाकुर आही । तिनके आगे कौनको शाही ॥
तीनी लोकके ठाकुर कहिये । तिनके और कौनको गहिये ॥
सोई मोहि अब देहु बतायी । मोरे मन चिंता समुहायी ॥
दूसर कौन सो देहु बतायी । हमरे मन गुमान नहिं आयी ॥

ज्ञानी वचन ।

सुनहु गरुड यक वचन हमारा । वह साहब है सबसे न्यारा ॥
यह तो सबै ईश्वरी माया । उपजहिं विनसहिं बहुरिविलाया ॥
वह नहिं आवे नहीं जाहीं । वह तो सदा अजर घरमाहीं ॥
उनकी आज्ञा इन पर आवें । तब इन गरभ वास सो पावें ॥
तुमपर सदा कृष्ण असवारी । काहे न दाया करहिं विचारी ॥
हम तो शब्द संदेशी आये । योनी संकट नहिं निरमाये ॥
तब हम उसको तत्त्व लखावा । होइ विदेह तब वचन सुनावा ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुडै अस्तुति ठानी । तुम साहिब निर्गुण सहिदानी ॥
तुमहो प्रभु सगुण ते न्यारा । निर्गुण तत्त्व साहिब विस्तारा ॥
धरि अस्थूलमोहि दरश दिखावा । निर्गुणशब्द प्रभु मोहि सुनावा ॥
अब गुरु मैं बन्दों तव पायो । अब जाना प्रभु तुम्हरो भायो ॥
निज प्रतीति हमरे मन आऊ । हंसराज मोहि दरश दिखाऊ ॥
अब प्रभु मोहीं दर्शन दीजे । हंस उबार आपन करि लीजे ॥
भेद तुम्हार सकल मैं पाया । धरि स्वरूप तुम दरशदिखाया ॥

ज्ञानी वचन ।

देह धरी हम दरशन दीना । तब उन चरणबन्दना कीन्हा ॥

गरुड वचन ।

शीश नाइ चरणन लपटाये । अब साहब मोहिं लेहु बचाये ॥
साखी-निगुण प्राण अधार तुम, दरश दीन्ह प्रभु आय ।
आपन करि समझावहु, लेहु जीव मुकुताय ॥

ज्ञानी वचन-चौपाई ।

अहो गरुड तुम चीन्हा भाई । दे परवान लेऊँ मुकुताई ॥
बाहर भीतर सबै बताओं । तुमसों गरुड कछून छिपाओं ॥
अब तुम जाहु कृष्णके पासा । आज्ञा मानिके करहु विलासा ॥
आज्ञा मांगि कृष्ण से आओ । तब आरती विस्तार बनाओ ॥
तबही गरुड गये पुनि तहवाँ । श्रीकृष्ण बैठे रहे जहवाँ ॥
जाइ गरुड तब विन्ती लाई ।

गरुड वचन श्रीकृष्ण प्रति ।

तुम प्रभु सदा संत सुख दाई ॥
हम यक निर्गुण भेद जो पाया । ताका हम प्रभु विन्ती लाया ॥
ओय कबीर संत्यलोकसे आये । तिन मोहि भेद कही समझाये ॥
उन अन्तर नहिं ऐसो दिढावा । निज साहब नहिं पृथ्वी आवा ॥
नाम कबीर उन आप धराया । यह शब्द उनही भाष सुनाया ॥
निर्गुण भेद सबनते न्यारा । अस उन हमसों कीन्ह पुकारा ॥
जो मोहि आज्ञा करो गुसाई । तौ उनको गुरु करिये जाई ॥
दाया करि मोहि आज्ञा दीजै । सो हम मानि अपन फिर लीजै ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

सुनिके कृष्ण उतर तब दीन्हा । भले गरुड तुम उनको चीन्हा ॥
भले गरुड तुम पूछा आयी । दुविधा दुर्मति कपट नशायी ॥
जो यह भेद गुप्त करि रखते । हमसों तुमसों अन्तर पड़ते ॥
जो तुम हमसों पूछो भाई । उनकर भेद है अगम उपाई ॥
वह निर्गुण हम सर्गुण भाई । निर्गुण सर्गुण बहु बीच रहाई ॥
हम सर्गुण कई बार औतारा । वह साहिब है सबते न्यारा ॥
जाकर पठाये वह यहाँ आये । तिनही पुनि हमकहाँ निर्माये ॥
उन आज्ञा जब कीन्ह उचारा । तब हम लीन जोइनि औतारा ॥
जो कबीर अहहीं अर्थाई । सोई वचन सत्य है भाई ॥

गरुड वचन ।

गरुड कहे तब काहे न भाषा । कैसे मोहि छिपाइके राखा ॥
निर्गुण भेद प्रभु मोहि छिपायी । सगुण भेद दीन्हा फैलायी ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

सुनो गरुड यक शब्द निदाना । निर्गुण भेद कोइ विरले जाना ॥
देह धरी हम क्रीडा कीन्हा । यहै मानि सब काहु लीन्हा ॥
हम गीता महँ सन्धि जनाई । ताको कोइ न चीन्हे भाई ॥
निर्भय भक्ति कइयो परमाना । ताकर भेद काहु नहिं जाना ॥
पढि गीता पण्डित बौराये । अर्थ भेद को गम नहिं पाये ॥
पढि गीता औरहि समझावे । आप भरममें जन्म गमावे ॥
करै अचार छूतिकै मानै । औरनको हीनहिं करि जानै ॥
सर्वमयी हमहीं सब माहीं । पण्डित अँधरे समुझत नाहीं ॥
हम सबमें सब हमरे माहीं । हमते भिन्न कोइ जानत नाहीं ॥
करै सो कौन अचार विचारा । पण्डित भूले धरि हंकारा ॥
सर्वमयी है नाम हमारा । पण्डित अर्थ न करै विचारा ॥
कहि गीता हम सब समझायी । गीता पढै समुझि नहिं जायी ॥
कब हम पूजा नेम बतावा । कब हम जीव घात फरमावा ॥
ब्रह्मा विष्णु औ शिव कहवाये । इन तीनों मिलि बाजी लाये ॥
तेहि बाजी अटका सब कोई । निर्गुण गमि कैसे के होई ॥
बाजी लायके जग भरमाया । निर्गुणकी गति काहु न पाया ॥
जो जो कछु हम कहा उधारी । सो काहु नहिं दृष्टि निहारी ॥
हम जानहिं सब भेद अवगाहा । और देव नहिं पामहिं थाहा ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव बाजी लाये । उन काहु नहिं और सुहाये ॥
अपस्वारथसों बहुविधि लीन्हा । परमारथ काहु नहिं चीन्हा ॥
गीता मथी कही समझायी । सो अर्जुन नहिं जानी भाई ॥
चारि वेद मथि गीता कही । सो अर्जुन निज मानी सही ॥

श्रवण लगाय गीता उन सुनी । रहनि गहनि एको नहिं गुनी ॥
 रहनि गहनि उनहुँ नहिं पायी । अर्थ सुनी सब कान उडायी ॥
 सुनि सुनि सो सब जग अरुझावे । सांचा भेद न कोई पावे ॥
 उनहुँ अचार विचार न छूटा । ब्रह्मा विनशे यम सो लूटा ॥
 श्रवण अवाज सबहिकी लीन्हे । रहनी गहनी कोइ न चीन्हे ॥
 अहमेव कीन्हो अधिकारा । ताते जाहि गले सोहि मारा ॥
 करै विचार पाखण्ड न छूटे । भर्म विगुर्चन यमकी लूटे ॥
 पण्डित बाँचि गीता अर्थावे । गीता केर अर्थ नहिं पावे ॥
 फिर फिर हमहीं को ठहरावे । पण्डित अँधरा भेद न पावे ॥
 सुनहु गरुड यक शब्द हमारा । होय निर्गुण जिव केर उबारा ॥
 हम कबीर कै निज करिजाना । उनहीं सकल कीन मण्डाना ॥
 उनही सब अस्थान दृढाया । जहँ ले तीर्थ तिन सबहि गढाया ॥
 जहाँ जहाँ उन चरन छुआया । सोइ सोइ तीर्थ अस्थान बनाया ॥
 आपु जानिके चर्ण जो दीन्हा । यहि विधि सबको थापन कीन्हा ॥
 वही मानि सब काहु लीना । आप गुप्त होय काहु न चीना ॥
 इन सबही मिलि बाजी लायी । आप आपकी कीन बडाई ॥
 जिनकी आज्ञा सब कछु भयऊ । तिनको छिपाये तीनों दयऊ ॥

साखी—कहें कृष्ण कबीरसों, गुरु तुम करो कबीर ।

हंस लै जइहैं लोक के, खेइ लगैहैं तीर ॥

चौपाई ।

चरण देखिके गरुड रिगायी । कीन्हो भेंट द्वारका जायी ॥
 वृन्दावन होय आज्ञा लीन्हा । दर्शन जाइ द्वारका कीन्हा ॥
 चरण देखि प्रदक्षिण दीन्हा । मस्तक नाइ बन्दगी कीन्हा ॥
 समरथ कहो मोहि समझायी । आरति साज मैं लेउँ मँगायी ॥
 तब हम उनपै पूछे लीन्हा । कहो कृष्ण आज्ञा कस कीन्हा ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड कह्यो अर्थाई । अस्तुति कीन्ह बहुत लौ लाई ॥
 एको बात गोय नहिं राखी । कृष्ण बहुत कै अस्तुति भाखी ॥
 निर्गुण के हम गम्य न जाना । बहुत भौंति उन गम्य बखाना ॥
 उनतो निर्गुण गम्य बतावा । ब्रह्मा विष्णु शिव पार न पावा ॥
 औ हम उन कहँदल जो दीन्हा । उन आवे की आज्ञा कीन्हा ॥

सतगुरु वचन ।

तब हम उनको भेद बतावा । एकोत्तर सै नरियर फरमावा ॥
 बहुत जतन कै मंडप छावा । बहु अनुरागी साज सजावा ॥
 जेतक साधु द्वारका आया । सबको गरुड कानि बुलवाया ॥
 जेतिक साधू तहाँ रहाये । गरुड सबहिंको दल पहुँचाये ॥
 जहँ ले मुनि हैं सहस अठासी । नाग लोकके नाग जो वासी ॥
 वासुकि देव जो आपु रहाये । औरो नाग बहुत चलि आये ॥
 आय विष्णु ब्रह्मा दोउ भाई । शीव आय बहु तेज जनाई ॥
 सब पर तेज महादेव कीन्हा । तुम सब मिलिके गरुडहिं चीन्हा ॥
 तबहिं गरुड पूछा सहिदानी । जोई कृष्ण कहा मोहि बानी ॥

गरुड वचन ।

सुनहु ब्रह्मा विष्णु महेशा । यह मुहि कृष्ण कहा उपदेशा ॥
 एति समय बीति जब जायी । तब हम तुमसों कहब बुझायी ॥
 जोइ कृष्ण सब कहा विवेकी । सो तुम्हरी मति आंखिन देखी ॥

महादेव वचन ।

यह सुनि महादेव रिसियाने । हमरी गति तुम काहु न जाने ॥
 हम तीनों हैं त्रिभुवन राई । हमहीं छोडि अवर चित लाई ॥
 तुम हैं पंछी मतिके हीना । हमहिं छोडि औरहिं चितदीना ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड कहे समझायी । मति हमारि कोइ विरले पायी ॥
 अजर अमर घर पहुँचे सोई । मती हमार लखै जो कोई ॥
 अवसर बीति जबै यह जायी । तब महादेव हम कहब बुझायी ॥
 सब साधुन की करिये सेवा । यह निज आहि भक्तिको भेवा ॥
 सबको गरुड़ जो भोजन दीन्हा । बहुत यतनकै भक्ति सो कीन्हा ॥
 करि प्रसाद जब माँड मँडायी । हमसे पूछी विन्ती लायी ॥
 तबहि गरुड विन्ती अनुसारी । चलिये समरथ चौक विस्तारी ॥
 धर्मदास सुनि चौका कीन्हा । लोक समान पयाना दीन्हा ॥
 संत समाज सब गावहिं गाजी । ऐसी भक्ति भक्त भल साजी ॥
 बजो शंख वीन स्वर सोई । झाँझन केरी बाजन होई ॥
 ताल मृदंग गगन सो बाजै । ऐसी भक्ति भक्त भल छाजै ॥
 शब्द स्वरूप तबै हम भयऊ । तुरत जाइ सत्यलोकहि गयऊ ॥
 सकलो साज वहां ते आना । बहुत भांतिकी भक्ति जो ठाना ॥
 सत्यलोक ते उतरे अंशा । अधम कालका भया विध्वंशा ॥
 सब समेत साज जो आये । जगमग ज्योति बरनिनहिं जाये ॥
 निर्गुण भक्त हो सुरति संजोई । कौतुक देखि रहे सब कोई ॥
 नागलोक को कीना मोही । ऐसी भक्ति न देखी कोही ॥
 शेषनाग भये आपु मोहाने । औरकी बातें काहि बखाने ॥
 मोहे ब्रह्मा विष्णु महेशा । नारद मोहे शुकदेव शेशा ॥
 गण गंधर्व मोहे सब झारी । निर्गुण भक्ति न परै विचारी ॥
 मोहे कृष्ण द्वारका वासी । मोहे सकल सिद्ध चौरासी ॥
 यह समाज सो कैसो आई । ताहि देखि सब रहैं झँवाई ॥
 ताते रंग उठे ततकारी । मोहि रहे सब सभा विचारी ॥
 मोहे विष्णु वैकुण्ठके वासी । मोहे इन्द्र रुद्र लोक कैलासी ॥

मोहे इन्द्र और उरबशी । नौ लख तारा सूरज शशी ॥
यहि विधि कीन्ह भक्ति मनलायी । तनमन सुधि सकलौ बिसरायी ॥
साखी-तेतीस कोटि देवता, गण गन्धर्व सब झार ।

सुर असुर सबही थके, लीला नाम अपार ॥

चौपाई ।

धन्य धन्य सब करहिं पुकारा । धन्य गरुडजी ध्यान तुम्हारा ॥
धन्य कबीर जिन भक्त उधारा । भक्ति ज्ञान का कीन पसारा ॥
धन्य गरुड सबही अस कीन्हा । ऐसी भक्ति हृदय चित दीन्हा ॥
भक्ति मंडान पहर दोय भयऊ । तहँ हम उठिके आरति कियऊ ॥
आरति भइ पुनि बहुतै भांती । बरणि न जाय शोभाकी कांती ॥
एकोतरनरियर मालुम कीन्हो । बांछि प्रसाद सबनको दीन्हो ॥
सत्य सत्य सबन मिलि कीन्हा । धन्यगरुड तुम यह मति लीन्हा ॥

गरुड वचन ।

विन्ती करै गरुड चित लायी । सबसे करब हम चर्चा जायी ॥
दया करहु हमपै गुरु देवा । तीनों देव सो कहिहो भेवा ॥
हम तो चरचा करब गुसाई । हमको दो लखाइ सब ठाई ॥

ज्ञानी वचन ।

अहो गरुड तुम हौ बड ज्ञानी । विद्या देहु सब घरके जानी ॥
घर आयेसे राड न कीजै । क्षमावंत हो बिदा सब कीजै ॥
बिदा देहु सबही सावधाना । तिनके घर तुम करिहो ज्ञाना ॥
अस्तुति ठानि चले सब देवा । धन्य कबीर देवनके देवा ॥
साखी-कहैं कबीर धर्मदाससे, यहिविधि आज्ञा लीन ।

अपने अपने लोक को, सबही प्याना कीन ॥

चौपाई ।

सबको बिदा जबहि करि दीना । तबहिं गरुड अस कहबेलीना ॥

गरुड वचन ।

हमको हुकम तुम देहु गुसाई । तुव प्रताप करौं बड़ाई ॥
 तुमरी कृपा काल हम जीता । सबही भाँति छुटी मन चीता ॥
 तुमरी दया आश सब झूटी । भया निराश तब फन्दा टूटी ॥
 अब मनमें मोहीं यक आवै । चरचा करनको मनमें भावै ॥
 जो आज्ञा हम तुमरी पावें । फिर सबहिं सो चर्चा लावें ॥
 त्री देवन सों कहूँ बुझायी । तिन कर फँद सब देहुँ तुडायी ॥

जानी वचन ।

तब हम तिनको बहु समझावा । निर्गुण सगुण सब भेद बतावा ॥
 पाई भेद गरुड मनसाने । त्रिदेव सो चरचा मन आने ॥
 तब हम आज्ञा तेही दीना । हमहू बिदा तहां से लीना ॥
 साखी-दया लेइ गरुड चले, हृदये धारि गुरु ज्ञान ।

ब्रह्मपुरी ठाढे भये, चर्चा कर मन ठान ॥

चौपाई ।

हुते द्वारका ज्ञान मंडाना । गरुड वहाँते कीन्ह पयाना ॥
 जाइ सुमेरु पर बैठे जायी । कीन्हो भेंट ब्रह्म सों आयी ॥
 गरुड ब्रह्म लोकहि जब आये । ब्रह्मा आदर कीन्ह बनाये ॥
 आदर भाव ब्रह्मा तब कीन्हा । डारि सिंहासन बैठक दीन्हा ॥
 जल करजोरि ब्रह्म लइ आये । गरुड के चरण पखारन आये ॥

ब्रह्मा वचन ।

धन्य गरुड यहाँ पगु धारी । अब पूजी सब आश हमारी ॥
 तुमतो बाहन कृष्ण के भाई । आज कृष्ण पग धारे आई ॥
 जो तुम हमपर दायी कीन्हा । कृष्ण बदल हम तुमकर चीन्हा ॥
 आयसु माँगि प्रसाद जो भयऊ । करि प्रसाद वैकुण्ठमें गयऊ ॥
 पान फूल जो अगर मँगायउ । इच्छा भोजन तहँवा पायउ ॥

बैठे जाय पुनि गरुड समाजा । उठि तब चर्चा निर्गुण साजा ॥
ब्रह्मा कह तुम कैसे आये । सो मोहि वचन कहो समुझाये ॥
कौने काज यहाँ पगु धारा । कहे ब्रह्मा तुम कृष्णके प्यारा ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड कहे समझायी । तुमहिं चितावन आयउँ भाई ॥
तुमहिं चितावन हौं पगुधारा । आदि पुरुष वह रहै नियारा ॥
साखी-विनु देखे को जाय यहँ, नहिं पावे कोइ ठाम ।

जन्म अनेक भरमत फिरे, मरे विनु गुरुके नाम ॥

आदि पुरुष आगम है, जाको सकल प्रकाश ।

निर्गुण भेद अपार है, तुम कहँ बांधी आश ॥

चौपाई ।

कोटिन ब्रह्मा गये सिरायी । अविगतकी गति काहु न पायी ॥
कोटिन ब्रह्मा पृथ्वी विलाने । अविगतकी गति काहु न जाने ॥
कोटिन विष्णू गये सिरायी । फिरि फिरिकै पृथ्वीहु विलायी ॥
कोटिन रुद्र देह धरि लीना । अस्थिर होय जगत् सो कीन्हा ॥
कोटिन इन्द्र अवतार जो लीन्हा । अविगतिपुरुषकाहु नहिं चीन्हा ॥
गण गंधर्व नर कौन चलावैं । सनक सनन्दन पार न पावैं ॥
शेष नाग बहु भांति भुलाने । आदिपुरुषकी खबरि न जाने ॥
सब परिवार जो भूले भाई । अवगति की गति काहु न पाई ॥
भुलादेखि जिव दया न आयी । जीव अनेक घात किहु भाई ॥
सब भूले कोइ लागु न तीरा । महा अधम सो आहि शरीरा ॥
देह धरी सब भरमें आई । आपन आप सब करै बडाई ॥
अहमेव कैसे खोजेहु जाई । माताको कहा न कीनेहु भाई ॥

१ जिन २ पुस्तकों में सृष्टि उपात्ति प्रकरणका वर्णन आया है, उन सबोंमें आद्याकी आज्ञाको न मान कर हठ करके ब्रह्माका निरञ्जन के खोजमें जानेका वर्णन आया है वहाँसे जानना चाहिये और यथार्थ भेद गुरुसे ।

कीन्हो खोज तुम आपु गुमाना । नहिं पाये तब रहे लजाना ॥
 खोज कीन्हो जब अन्त न पावा । तब तुम आप आप ठहरावा ॥
 आपु दृढाय थापना कीन्हा । सोई अहम् निर्गुण नहिं चीन्हा ॥
 तुमरे भूले जगत भुलाना । आदिपुरुषको मर्म न जाना ॥
 यहि विधि जग सब रहत भुलायी । टीका मूल काहु नहिं पायी ॥
 तेतीस कोटी देव भुलाये । यहि भूले कोइ गम्य न पाये ॥
 साखी-मूले गम्य न पाइया, भूले मूढ गँवार ।

टीका भूल न जानई, अरुझि रहा संसारा ॥

चौपाई ।

तुम बाजीगर बाजी लाये । तुमतो सब दुनियाँ भरमाये ॥

ब्रह्मा वचन ।

सुनि ब्रह्मा तबहीं रिसियाने । हमते दूजा केहि को जाने ॥

रुगड वचन ।

सुनु ब्रह्मा यक वचन हमारा । तुम अस ब्रह्मा कोटि हजार ॥

कोटिन ब्रह्मा ठाढ़े द्वारा । कोटिन वेद सो करहिं उचारा ॥

खोज करन ब्रह्मा तुम गयऊ । कहूँ पिता के अन्त न पयऊ ॥

झूठ कहे मातासों जायी । ताते ब्रह्म शाप तुम पायी ॥

माता ते तुम भये लबारा । आय जीवमें सकल संसारा ॥

सबकी प्रतिमा थीर न आयी । आपु समेत सकलो भरमायी ॥

जो कोइ कहै भूलकी वानी । कोटिन जन्म नरककी खानी ॥

यह संसार रहट की घरिया । कइक बार राजा अवतरिया ॥

कइक बार नरक में परई । कइक बार ब्राह्मण औतरई ॥

यहि विधि जीव आवे जायी । भरमि भरमि चौरासी पायी ॥

कोटिनबार अस्थावर जानी । कोटिन बार पिंडज उत्पानी ॥

कोटिन जन्म अंडज अवतारा । यहि विधि भरमहिं जीवविचारा ॥

यहिविधि भरमें जीव विचारा । बिनु सतगुरु नहिं होय उबारा ॥

साखी—कहे गरुड समझाइके, सुनहु ब्रह्म यह बात ।
अविगत पुरुष सु और है, जाके माय न तात ॥

ब्रह्मा वचन—चौपाई ।

सुनि ब्रह्मा तब पूछे बानी । कैसे अविगतिकी गति जानी ॥
कौनी युक्ति साच कै मानी । साहिबकी गति कैसे जानी ॥

गरुड वचन ।

गरुड कहै तुम आपही ज्ञाना । जहाँ गर्व तहाँ पुरुष छिपाना ॥
गर्व गुमान में जो है पूरा । रहै सदा सो धूर अधूरा ॥
साखी—मानुषदेह अपराधि है, देह धरे अभिमान ।
ताते सबै विगुर्वे, भक्ति मर्म नहिं जान ॥

चौपाई ।

भक्ति जो आदि अंतसे आयी । जाते सकल माँड निर्माथी ॥
ताकर मर्म जो जाने नाथी । ताते काल फांस निर्माथी ॥
साखी—लोक वेद जानै नहीं, करै भक्ति अभिमान ।
ताते सबै विगुरचे, भक्ति करन का जान ॥
ध्वजा जो फरके शून्यमें, बाजे अनहद तूर ।
तकिया है मैदान में, पहुंचेगा कोइ शूर ॥

ब्रह्मा वचन—चौपाई ।

ब्रह्मा कहै गरुड सुनु भाई । अपने मुख तुम करहु बडाई ॥
इतना ब्रह्मा किया विचारा । देवविमान तुरत भये ठाढा ॥
कहे ब्रह्मा तुम जाहु विमाना । लाओ विष्णु बुलाइ सयाना ॥
चला विमान विष्णु पै गयऊ । तबहि विष्णु अस पूछनलयऊ ॥
कहो विमान कहाँ पगु धारे । सत्य सत्य कहो बचन सम्हारे ॥

विमान वचन ।

गरुड भक्त यक आया देवा । सो नहिं माने तुम्हरी सेवा ॥

सुनते विष्णु विमान चढाये । चढि विमान ब्रह्मलोकहि आये ॥
विष्णुपुरीसे विष्णु जब आये । बैठे जाय ब्रह्माके ठाये ॥

विष्णु वचन ।

केहि काज पर मोहि बुलायी । सो मोहि भेद कहो समझायी ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा वचन कहै अर्थीवै । कहै गरुड हम केहि चेतावै ॥
हमको मनुष देह करि जानै । आदि पुरुष औरे को माने ॥
भले विष्णु तुम आये भाई । अब शिवको तुम लेहु बुलाई ॥
गढ कैलास शिवका अस्थाना । तहँको अब तुम जाहु विमाना ॥
सब देवनको आनु बुलायी । सुनहीं चर्चा गरुड की आयी ॥
महा विमान तुरत चलि गऊ । गढ कैलासपर ठाढे भयऊ ॥
शिवशंकर को माथ नवायी । पाछे ब्रह्माका वचन सुनायी ॥
ब्रह्मा गरुड जहँ झगर पसारा । तेहि कारण तुम सबे हँकारा ॥
ब्रह्मा विष्णु बैठे एक ठाई । कीन्ही चर्चा मंड मँडाई ॥
गरुड सबहि का करै उच्छेदा । सो मैं तुमहि बतायो भेदा ॥
बाजे डमरू हनै निशाना । चले रुद्र तब साजि विमाना ॥
तुरत चले नहि लाये बारी । चले रुद्र आये पगुधारी ॥
ब्रह्माको जहँ भयउ उछेदा । बैठे जहाँ करे बहु भेदा ॥
इन्द्र लोक सो इन्द्र बुलाये । जेहि सँग देव सबै चलि आये ॥
सो सब चलि ब्रह्मा पहुँ आये । वासुकि देव जो आप रहाये ॥
आवत उनके नाग बहु आये । बहुतै नागिन आयी बहुभाये ॥
सुर नर मुनि सब आनिबुलायी । जो जस आसन तस बैठाई ॥
ब्रह्मा विष्णु बैठे एक ठावा । गरुड तहाँ पुनि ज्ञान सुनावा ॥

गरुड वचन ।

अविगतिकी गतिआहि निनारा । सब भूले कोइ पाउ न पारा ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कहै विष्णु सों बाता । गरुडको ज्ञान सुनो विख्याता ॥
हम तीनों अवरै नहिं कोई । हमरे परे सुनावै सोई ॥
ब्रह्मा कहै विष्णु सों बाता । हमको कहत है परलय घाता ॥
हम तो तीन लोकको कीन्हा । हमको सकल देवता चीन्हा ॥

गरुड वचन ।

तबहि गरुड यक वचन उचारा । जब कर्ता तुम सृष्टि सवाँरा ॥
वह साहब सबही ते न्यारा । कस नहिं ताकर करो विचारा ॥
जिन साहब तुम्हें निर्मायी । तुम कस ताको नाम छिपाई ॥
विष्णु रहत हैं तुम्हरे पासा । तिनहुँको पुनि काल गरासा ॥
क्रोधवन्त ब्रह्मा तब भयऊ । अचरज बात गरुड जो कहेऊ ॥
जाकी तैं पुनि सेवा करई । सो तो हमरे त्रास महँ डरई ॥
सुर नर मुनि सब काहु चीन्हा । सुनु पंछी तैं मतिका हीना ॥
लोक वेद सब हम कहँ जाने । ना जानूँ कस आपन चित आने ॥

गरुड वचन ।

सुनु ब्रह्मा तैं गर्व भुलासी । तोहि अस ब्रह्म कोटि मरासी ॥
हम तो ब्रह्मा बहुत जो देखा । जो पूछहु तो काढों लेखा ॥
काढों विष्णु कोटि सै चारी । महादेव जाके भंडारी ॥
मैं तो भक्त कबीरका चेला । युगन युगन जिन कीन्हो मेला ॥
हमसों कह्यो कबीर बुझायी । ताते आय कह्यो गोहरायी ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कोपि उठे तब भाई । विष्णु महादेव सुनहूँ आई ॥

विष्णु वचन ।

आये दूनो जन ब्रह्मा ठाई । विष्णु कहे कस मता दिढाई ॥
काह आज जिव बहुत उदासा । कीन्हो क्रोध गरुड के पासा ॥
कहो वचन मुख होय प्रकाशा । हम अजान हैं तुम्हरे आशा ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कहै सुनो हो भाई । अविगत की गति गरुड सुनाई ॥
 हमहीं तीन अवर नहिं कोई । चौथे एक निरंजन सोई ॥
 ताको गरुड न माने भाई । ताते मोहि क्रोध भौ आई ॥
 तिहि कारण हम तुम्हें बुलावा । गरुड ज्ञान हमहीं समझावा ॥

विष्णु वचन ।

विष्णु कहैं सुनो गरुड विचारी । आदि अंत कोइ अगम है भारी ॥
 एक ध्यान हमहूँ नहिं कीना । अविगति बात हमहूँ नहिं चीना ॥
 अहमेव मटी सुरत लगाया । अविगति ध्यान तबहूँ नहिं पाया ॥
 ध्यान मध्य हम देखा जाही । ब्रह्मा विष्णु महादेव नाहीं ॥
 साखी-विष्णु नहीं ब्रह्मा नहीं, महादेव नहिं कोय ।

ओम् ओंकार तहवाँ नहीं, निरखि देखा हम सोय ॥

ब्रह्मावचन-चौपाई ।

तब ब्रह्मा अस वचन उचारा । यह है बडा काल वटपारा ॥

विष्णु वचन ।

सुनु ब्रह्म अविगती कहानी । विना तत्त्व मैं निरखा बानी ॥
 ताकी का कहिये अब बाता । अगम अपार कहूँ विख्याता ॥
 साखी-निःकामी निध्यानि सोइ, निष्प्रेमी निर्वान ।

कहै विष्णु ब्रह्मा सुनो, अविगति यहि विधि जान ॥

चौपाई ।

ब्रह्मासों कहै विष्णु बखानी । है कोइ आदिपुरुष निर्वानी ॥
 दुर्वासा संग रहे जब भाई । अविगति की गति तब हम पाई ॥
 तबका बोल हम कीन्ह परमाना । ताते हम जानहिं निरबाना ॥
 दुरवासा गुरुभक्ति दढाया । तबते हमहु परम पद पाया ॥
 साखी-ब्रह्मा हमकहूँ जानहूँ, और न कोई सांच ।

दढा ज्ञान नहिं आवई, ताते काया कांच ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कहै सुनो विष्णु विचारी । हमही रचा पुरुष औ नारी ॥
हमते और कौन है भाई । सो मोहि भेद कहौ समझाई ॥
हम तो सर्गुण सकल पसारा । हमतो अगम निगम विस्तारा ॥
हमतो रचा पवन औ पानी । हम कहँ वेदव्यास बखानी ॥
हम चौरासी नाव जो कीन्हा । हम निर्गुण सरगुण चीन्हा ॥
इतनी कथा कहि ब्रह्म सुनाई । तबहूँ गरुड न मानैं भाई ॥

गरुड वचन ।

कहै गरुड सुनो ब्रह्म कुमारा । तुम कहँ रची सृष्टि करतारा ॥
सबको रची सबै जिन कीना । वह तो पुरुष सबन ते भीना ॥
वह तो पृथ्वी पाँव न दीन्हा । शब्दहि ते सकलो जग कीन्हा ॥
जो आप रचना करि जाना । तो हमसे हठि भाषहु ज्ञाना ॥
जो तुम रचा पवन औ पानी । पृथ्वी अकाश तुमहिं जो ठानी ॥
रचा तुम्हार तब जानहिं भाई । अब रचहू तुम फिरि विनशाई ॥
जो तुम्हार है सकल बनाई । फिरिके परलय करहु तुम भाई ॥
तब हम जानहिं कीन तोहारा । यह मेटहु सकलो विस्तारा ॥
अपने हाथ रचै जो कोई । फिरि कै मेटि सकै पुनि सोई ॥
तब ब्रह्मा सुनि रहे लजाई । सम्मुख उत्तर कह्यो न जाई ॥

महादेव वचन ।

कहे महादेव सुनो रे भाई । अचरज बात कही नहिं जाई ॥
सुनु ब्रह्मा गरुड जो कहई । ताकर भेद कोई विरला लहई ॥
दश औतार विष्णु जो लियऊ । काया काल ग्रास जो कियऊ ॥
तबही कृष्ण भेद यक कीन्हा । ताको ब्रह्मा तुम नहिं चीन्हा ॥
गोपी ग्वाल सबै हरि लाये । तब जो कृष्ण सब दीन मेराये ॥
इतनी बात ब्रह्मा नहिं जानो । अविगतिकी गतिकैसे पहिचानो ॥

साखी—कौन सरूपी कृष्ण है, कौन धरे अनुमानु ।

देह धरे नहिं चीन्हहु, निर्गुण कैसे जानु ॥

चौपाई ।

निरगुण को गुण है बड भारी । जिन उत्पन्न कियो सब सारी ॥
वह तो पुरुष मूल है माथा । गति प्रतीति ताही के साथी ॥
नहीं महातम पुरुष की पूजा । जप तप संयम नाम बिनु दूजा ॥
वार पार नाम नर सेई । अजर नामको सुमिरन देई ॥
बारहिं बार नाम लौ लावे । अजर अमर होय लोकसिधावे ॥
नाम सिखापन बदन सो खोले । विना नाम विनु महातम डोले ॥
सतगुरु बिना मर्म नहिं जानै । हमें तुम्हें सब जगत बखानै ॥

ब्रह्मा वचन ।

सुनो महादेव साँच बखाना । निर्गुणके गुण हमहूँ नहिं जाना ॥
अविगतिकी गति हम ना जानी । योगी जंगम सेवि हम जानी ॥
सुर नर मुनि सब हमको ध्यावें । हम उपजावें हमही विनशावें ॥
साखी—मैं उपजावों मैं विनशावों, मैं खरचों मैं खाऊँ ।

तीन लोक पैदा करों, मोर ब्रह्म है नाऊँ ॥

गरुड वचन—चौपाई ।

ममताते नर नरकै जायी । ताते बहुरि बहुरि जन्मायी ॥
तुहि अब ब्रह्मा बहुत विचारा । ताते काया बिनसे सब सारा ॥
तू ब्रह्मा अस जो धरे हँकारा । तेहिते काल भया वटपारा ॥
सुनु ब्रह्मा अविगति की बाता । एकै पुरुष एक है माता ॥
सुनहु सब सभा विचारो । एक मैं निरखि कहौं निरुआरो ॥
वहि साहबकी खबरि न पावा । तुव अस ब्रह्मा बहुत उपावा ॥
वही हम निरखि परखिके जानी । साहब शब्द लेहु पहिचानी ॥

साखी-कहो ब्रह्मका भूलहू, कहौं तोहि समुझाय ।

मोर मोर कै धावहू, ममता अमल चलाय ॥

चौपाई ।

ममिता ते दशों अवतारा । ममिता महादेव धरु छारा ॥

ममिता लोमश योग जो कीन्हा । आयु बढी भगती नहिं चीन्हा ॥

ममिता ते आपुहिं जो रहेऊ । ममिता ते तीनलोक बहि गयऊ ॥

ममिता तेज निरञ्जन कियऊ । ममिता ते पुरुष दरश न पयऊ ॥

तुम ब्रह्मा कीन्हे अभिमाना । तेहिते साहब अछय छिपाना ॥

साखी-ब्रह्मा गर्व तुम कीनिया, सुनि राखू यक बात ।

जो साहब अभि अंतरे, सोई सदा सँघात ॥

तुम अज्ञानी नहिं जानहू, सुनु ब्रह्मा यक बात ।

अविगति अगम अपार है, समरथ सदा सँघात ॥

विष्णु वचन-चौपाई ।

विष्णु कहैं सुनो हो भाई । चलहू तुरत ज्योतिपहँ जाई ॥

ज्योति कहै सो सुनिये भाई । सब मिलि चलहु सांच कै आई ॥

आंखिन देखी पूछि न जाई । पाय अभिमान चीन्हे नहिं पाई ॥

अभिमानमता सब दूर करि दीजे । सांच बस्तुको धारण कीजे ॥

अभिमान समेत चीन्हे नहिं कोई । देह धरी सब गये विगोई ॥

आपा थापि सुधि बुधि खोई । आपा छोडे पावे सोई ॥

महादेव वचन ।

तब महादेव कहैं विचारी । अहो विष्णु पूछहु महतारी ॥

जो वह कहैं सो हम तुम मानैं । औरी बात नाहिं हम जानैं ॥

ब्रह्मा विष्णु से हुई यह बाता । तुम बडे हो कि बडी है माता ॥

सबै मिली तब कीन्ह पयाना । जाइ माता ढिग कीन्ह बयाना ॥

माता बोलहु सतके भाऊ । नहिं अरुझावहु भाषि सुनाऊ ॥

तीनों देव कहैं सुनु माता । और कौनपुरुषआहिविधाता ॥
हम तीनों कि और है कोई । यह निज भेद बतावहु सोई ॥
माता वचन ।

तब माता बोले हितकारी । कस न ब्रह्मा करहु विचारी ॥
जब तुम हते हमारे पासा । तब तुम कीन पिता की आसा ॥
तबकी बात विसरी तुम गयऊ । पुरुष ते विमुख तुम भयऊ ॥
पुनि माता यकवचन अनुसारी । महादेव हौ कृतम भिकारी ॥
अमर वचन जो हमहीं भाखा । युग चारों देह अमर राखा ॥
सोई वचन भूलि जो गयऊ । मातुपिता सों अंतर लयऊ ॥
पुनि माता गरुडसे बोली । अमृतवचनरसाल अतिखोली ॥
कहै माता सुनु गरुड सुजाना । तुम तो वचन कही परमाना ॥
गरुड वचन ।

गरुड तब पूछे ज्योतिसों बानी । कैसे तुम यह सिरजा खानी ॥
माया वचन ।

तब उन कहा पुरुष सों बानी । पावक नीर पवन वैसानी ॥
जलरंग अंश सो साथहिं रहई । ताकी खबारि कोई नहिं लहई ॥
प्रथम अंश जलरंग जो कीन्हा । तब जल सिन्धु नाम कहि दीन्हा ॥
साखी-ब्रह्मा विष्णु कोई नहीं, महादेव भी नाहिं ।

पुरुष एक तब अविगति, अगम अगोचर माहिं ॥

ब्रह्मा वचन-चौपाई ।

कहे ब्रह्मा हम आपु प्रकाशा । हम पुहमी नौखण्ड निवासा ॥
हम हैं नीर हमहिं हैं पवना । हमहीं रचा सकल सब भवना ॥
हमहीं पांच तत्त्व सब कीन्हा । हमहीं आप सृष्टि रचिलीन्हा ॥
हमहीं सकल सृष्टि विस्तारा । हम कर्ता है सकल पसारा ॥
हमहीं चन्द्र सूर दिन राती । हमहीं कीन्ह किरतम उत्पाती ॥
हमहीं आदि अंत मधि तारा । हमहीं अंध कूप उजियारा ॥

हमहीं ब्रह्मा विष्णु महेशा । हमहीं नारद शुकदेव शेशा ॥
 हमहीं कंस कृष्ण बलि बावन । हमहीं रघुपति हमहीं रावन ॥
 हमहीं हैं मच्छ कच्छ बराहा । हमहीं भादों फागुन माहा ॥
 हमहीं दशौ भये अवतारा । तीरथ बरत देहरा धारा ॥
 हमहीं हंसा समुद्र तरंगा । हमहीं सरस्वति यमुना गंगा ॥
 हमहीं योग युक्ति व्रत पूजा । हमहीं छाँडि देव नहिं दूजा ॥
 हमहीं पठना गुनना लीखा । हमहीं पाप पुण्य गुरु शीखा ॥
 हमहीं विद्या वेद पुराना । हमहीं कीन कितेक कुराना ॥
 हमहीं आवें हमहीं जावें । हमहीं आदि अन्त की छावें ॥
 तीन लोक हमहीं विस्तारा । सकल निबल देही हम धारा ॥
 साखी-तीन लोक में रमिरहे, सबही मोही मान ।

कहु माता समुझायके, किरतम कैसे जान ॥

माता वचन-चौपाई ।

तब माता अस बोली वानी । तू तो ब्रह्मा चतुर सुजानी ॥
 हमसे भयी उत्पत्ति तुम्हारी । तुमही पुत्र हमही महतारी ॥
 पिता केर खोज जो कीन्हा । तब हम तुमको हुकुम न दीन्हा ॥
 बरबस कै तुम खोजेउ जायी । तब हम पिताकी खोज बतायी ॥
 तब हम तुमसों बोली वानी । दर्शन ते बेमुख तुम्हें जानी ॥
 तब तुम पैज बाँधि कै चलेऊ । पिता के दरस नहीं तब भयऊ ॥
 जो तुम कीन्हे सकल बखाना । ताकर मोसों कहो विधाना ॥
 जो आपुहिं आप तुम रहऊ । कवनके खोज करन तुम गयऊ ॥
 काहे को बोलहु अनरीती । तुम लबार सों कीन्ही प्रीती ॥
 बरबस खोज पिताके गयऊ । खोजनपाय अमरख तब भयऊ ॥
 तब हमतो बोले झूठे लबारा । तैसहिं सब चलही संसारा ॥
 एक वार लबारी करेऊ । तब हम तो कहँ शाप सो दयऊ ॥
 अब बोलहु तुम वचन सम्हारी । काहे ब्रह्मा बोलु लबारी ॥

साखी-भाषहु वचन सँभारिकै, जनि बोलहु अज्ञान ।
 परमपुरुष एक अगम है, ताकर करहु ध्यान ॥
 चौपाई ।

हम तो सत्य वचन चित धरऊ । हम तुम सत्य पुरुष ते भयऊ ॥
 ममता तेज बहुत तुम कीन्हा । आदि अन्तको नाहिन चीन्हा ॥
 माता वचन कह्यो सब झारी । तब ब्रह्मा मन आयी हारी ॥
 गरुड वचन ।

सुनु ब्रह्मा तुम कौन मति ठानी । माता कहै सो कहा न मानी ॥
 जो नहिं यह वचन परमानो । ज्योतिकहै सो सब मिलिमानो ॥
 सुनि ब्रह्मा को गर्व परहारा । एक पुरुष जिय कियो है चारा ॥
 परम पुरुष तेहि कीन प्रकाशा । जिनकी जगत लगावे आशा ॥
 चौसठ युग वही प्रकासा । सत्तर युग है वाके पासा ॥
 सहस्र युग गये शून्य वे शून्ने । नहिं तहँ पाप नहीं तहँ पुन्ने ॥
 तुम सम ब्रह्मा केतिक गयऊ । हम तब सब कर भेदे लयऊ ॥

साखी-सुनु ब्रह्मा का जानई । तुम तो करम के खोट ।
 तेहिते हाल विनसिहो, जनी कहावहु छोट ॥
 सुनु ब्रह्मा कहँ भूलिया, जनि करहु तुम रोख ।
 जन्म जन्म चौरासिया, यहिविधि पावो धोख ॥
 कहै गरुड समुझायके, जनि भरमहु अभिमान ।
 साहिब एक अगम्य है, ताकर करहु पिछान ॥
 चौपाई ।

टीका मूल एक हम देखा । तहाँ है निज शब्द विवेखा ॥
 विष्णु वचन ।

ब्रह्म महादेव सुनहु भाई । सब परदेव निरञ्जन राई ॥
 एक निरञ्जन और न कोऊ । तेहिते अपर और नहिं होऊ ॥
 तेहिते और नहीं कोइ पारा । सो तो सकल भुवन सरदारा ॥

वही सकल भुवनका स्वामी । वही परम ब्रह्म अन्तर्यामी ॥
 उनही नारी पुरुष बनावा । सकल सृष्टि उनही सिरजावा ॥
 लाख चौरासी उनहि सँवारा । उनही गोरख नाम धरावा ॥
 उनही छलि बलि पताल पठावा । काल रूप धरि जगमें आवा ॥
 उनही यह सब खेल खिलायी । उनही सकल सृष्टि उपजायी ॥
 साखी—कहे विष्णु गरुड सुनु, कहे सुने का होय ।

एक निरञ्जन आपु है, दूजा और न कोय ॥

सात द्वीप नौखण्डमें, एक निरञ्जन होय ।

और कौन सो देखिये, ताको कहिये सोय ॥

गरुडवचन—चौपाई ।

मैल मलीन सकल संसारा । सो निर्मल जाके अंत न पारा ॥
 मैले ब्रह्मा मैले इंद्र । रवि मैला मैले शशि चन्द्र ॥
 मैले सनक सनन्दन देवा । मैले यह जग लहै न भेवा ॥
 मैले शिव ब्रह्मादिक देखा । मैले लोक ब्रह्माण्ड विशेषा ॥
 निशि वासर मैले दिन तीसा । मैले काल मैले अवनीसा ॥
 मैले जोत मैले तन हेता । मैली काया मैल समेता ॥
 मैले निरंजन नर नहिं जाना । उन यह सृष्टि कीन्ह पिसमाना ॥
 निर्मल नाम एक है श्वेता । निर्मल सो जो नामहिं लेता ॥
 कहै गरुड ते जन परमाना । जो निर्मल निज नामहिं जाना ॥
 साखी—निरंकार ओंकार है, पार ब्रह्म है सोय ।

एक नाम चीन्हे विना, भटकि मुवा सब कोय ॥

साहब इनहि बनाइके, आपुइ रहै निनार ।

सो निज नाम जाने विना, कैसे उतरे पार ॥

चौपाई ।

कहत सुनत सबही सुधि पायी । कहत सुनत सब तीर्थहिं जाई ॥
 कहत सुनत ज्ञान बहु करई । दम्भ अभिमान बहुत सो धरई ॥

कहत सुनत नर तीर्थहिं जायी । भरमत भरमत गल फांसलगायी ॥
 कहत सुनत सब सुनै पुराना । कहत सुनत सब देत है दाना ॥
 कहत सुनत सब खेती करई । कहत सुनत नर माया धरई ॥
 कहत सुनत जो चुगली करई । होय चण्डाल नरक महुँ परई ॥
 कहत सुनत नर कूप खुदावे । कहत सुनत उद्यम मन लावे ॥
 कहत सुनत स्वाद मन धरई । कहत सुनत नर गढहे परई ॥
 कहत सुनत नर माया जोरी । सौ सहस्र औ लक्ष करोरी ॥
 कहत सुनत गुरु शिष्य जो करई । आप अजान भरम में परई ॥
 कहत सुनत भक्ति जो ठानी । कहत सुनत पायन पर आनी ॥
 कहत सुनत सागर तलाव बनावै । कहत सुनत पाप पुन्य कमावै ॥
 साखी—कहत सुनत सब गये हैं, कहत सुनत सब जाय ।

कहत सुनत करनी करे, तब प्रभु परसे आय ॥

महादेव वचन—चौपाई ।

क्रोधवंत महादेव तब भयऊ । हमहु को उठाय तुम धरऊ ॥
 महादेव बोले बात विचारी । हमको जान्यो किरतम भिकारी ॥
 हमको मनुष देह करि जाना । भूली बात करे बखाना ॥
 महादेव अस युक्ति बतायी । कहो तो सकलो देऊँ दिखायी ॥
 कहो अकाशको बन्द बताऊँ । सात द्वीप नौ खण्ड दिखाऊँ ॥
 अचरज एक बात उन भाखी । कहो तो आनि दिखाओं साखी ॥
 कहो तो गरुडही मारि कै डारों । कहो तो योग जीतहिं मारों ॥
 कहो तो काल रूप हम धारें । कहो तो पलमहुँ मारि सँघारें ॥
 कहो तो याही देउं भुलायी । बहुरि न हमसों हो बौराई ॥
 यह सो बकवाद विचारा । हमसों बाजी करै अपारा ॥
 यह तो आदि अंतसे आये । तेहिते ब्रह्मा विष्णु कहाये ॥
 हमहीं सिरजें पालैं मारैं । दानव देवी मारि उखारैं ॥

ब्रह्मा तो है जेठा भाई । वेद वाक्य सब कहै बनायी ॥
कैसे ब्रह्मा शीव उठावै । कैसे विष्णुहि हीन दिखावे ॥

साखी-अगमनिगम सब जानई, कहै मुक्तिका नीव ।
विष्णु काया दिठावई, योग दिठावे शीव ॥

गरुड वचन ।

सुनो महादेव मतिके हीना । तुम नहिं जानो पुरुष प्रवीना ॥
तुम तो आपहि गर्व भुलाये । तुम सेवक साहब होय आये ॥
तुम किंचित हौ जीव विचारे । तुम्हरे कहे होय का पारे ॥
तुम्हारा किया कछू ना होई । आप पुरुष उपजावे सोई ॥
आप सुरत प्रभु कीन उचारा । तब तहँ चौदह भुवन सँवारा ॥
सेवा बदले पाय तिहुँलोका । जीवन कारन लाये धोका ॥
धोका लाय ठरयो संसारा । तीन लोकमें फन्द वसारा ॥
साखी-ब्रह्मा विष्णु महेश्वर, सुनहू सत्य विचार ।

वह तौ पुरुष अखण्ड है, अपरमपार आधार ॥

तुम तीनों मिलि आपा थापी । आपा थापी भये महा पापी ॥

सतगुरु वचन ।

सुनु धर्मेनि औरो यक बाता । उहँ तो सबै ज्ञानमहँ राता ॥
जब देख्यो सब आपा थापै । करत बडाई नहिं तनिको धापै ॥
तब अस युक्ति किया बनाई । जाते होय परीक्षा भाई ॥
बंग देश बालक यक रहेऊ । जाति ब्राह्मण सबै तेहि पयऊ ॥
ताकर आयू सबै खुटानी । मृत्यु आयी निकट तुलानी ॥
ताको ज्ञान अस हम दीना । मृत्यु निकट भयी आयु छीना ॥
काल वचन उपाय विचारो । ब्रह्मादिकके निकट पग धारो ॥
लाय गरुड तुरत पहुँचाये । ब्रह्मा विष्णु शिवहि बताये ॥

गरुड वचन ।

कहै गरुड सुनो यक वानी । यहि बालककी मृत्यु नियरानी ॥
 याको कोई नाहिं सहाई । याते आयो तुव शरणायी ॥
 यहि बालकको कौन जो राखे । सत्य वचन हम मुखते भाखे ॥
 तुम तीनों त्रिभुवनके देवा । बालक ठान्यो तुम्हरी सेवा ॥

ब्रह्मा वचन ।

तब ब्रह्मा बालक सों बोले । जानि प्रभुता आपन मुख खोले ॥
 कहे ब्रह्मा वचन हितकारी । को तेरा बाप को है महतारी ॥
 कहु बालक कहाँते आया । किन तुमको यहां पठाया ॥
 कौन साहब दीन्हा औतारा । कौन तुझेको मारनहारा ॥

बालक वचन ।

तब बालक बोले अनुसारी । को है पिता को है महतारी ॥
 ना जानूँ किन दिया औतारा । ना जानूँ को मारन हारा ॥
 हम पूछे कोई राखहु भाई । तेहि कारन आये तुम्ह ठाई ॥
 साखी-तीन लोक के ठाकुर तुम, ब्रह्मा विष्णु महेश ।

मैं तो कछु जानो नहीं, काहि कहौ संदेश ॥

महादेव वचन ।

सुनो बालक मैं कहूँ बुझायी । मृत्यु तुम्हारी नियरे आयी ॥
 इहां कौन है राखन हारा । धर्मराज तुव कौन पुकारा ॥
 केहि विधि यहां कैसे रहिहो । कौन शब्द पुरुष पद पैहो ॥
 कैसे के भवसागर तरिहो । कौन भक्ति हृदय चित धरिहो ॥
 सोई भेद कहौ समुझायी । जाते तुम्हरा दुःख नशायी ॥

हंसा (बालक) वचन ।

हम तो तुम्हरी शरणे आये । जस जानो तस करो उपाये ॥
 हमरी तो अब मृत्यु तुलानी । हम का जानें शब्द औ वानी ॥

अब करु वेगि सम्भारी मेरी । अब जनि करहु देव तुम देरी ॥
मृत्यु हमारी तुली अब आयी । तुम अब हमको लेहु बचायी ॥
जो तुमसे नहिं बाचूँ भाई । मिथ्या तुम का करहु बडाई ॥
तुम सेवक साहब का होऊ । दूसर साहब है निज कोऊ ॥

विष्णु वचन ।

विष्णु कहे सुनु बालक भाई । अब तोको यहां कौन छुडाई ॥
कैसे को अब राखें भाई । कैसे को तुव काल छुडाई ॥
कैसेके तोर काल छुडाओं । कैसे आवा गमन मिटाओं ॥
साखी-काल बडा प्रबल अहै, मो पै कछू ना होय ।

वासे नहिं कोई बाचई, ब्रह्मा विष्णु विगोय ॥

चौपाई ।

सब मिलि रहे काल के साथी । काल फिरत है सब के माथा ॥
काल की गति हम नहिं जाने । धोखे यम के हाथ विकाने ॥
साखी-काल कि गति जाने नहीं, ब्रह्मा विष्णु महेश ।

ऋषी मुनी सब कम्पहीं, कम्पे शेष सुरेश ॥

चौपाई ।

केतिक देह हमही जो धरिया । फिरिफिरि कालके फन्दे परिया ॥
देह धरी धरि जगमें आये । यहि पृथ्वी में नाम धराये ॥
साखी-कालसों कोई ना बचै, सुनु बालक चित लाय ।

कैसे कै मैं राखिहों, मोसों राखि न जाय ॥

चौपाई ।

देह धरे नहिं बचिहो भाई । सबको काल धरी धरि खाई ॥
काल बडो है अति बलवंता । देवी देवा खाय अनन्ता ॥
सप्त द्वीप जो हैं नौ खण्डा । काल बली सबहिन को डण्डा ॥
तीन लोक पै करे रजधानी । हमहूँ ताकी सेवा मानी ॥

विष्णु कहे ब्रह्मा सों बाता । यह बालक कीन्हा उत्पाता ॥
 यह वृत्तान्त तुम जानो भाई । तुम बालक को लेहु बचाई ॥
 ब्रह्मा तब सुनि रहे लजाई । हमसे बालक राखि न जायी ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड जो बोलै बानी । बालक जिये तब तोहिं जानी ॥
 आपा रोपि रहे ठहराई । किया तुम्हार न होवे भाई ॥
 जो तुम आज बालकको राखो । तौ तुव वचन सत्य कै भाखो ॥
 कहै गरुड सो तरक लगायी । बालक काहे न राखु बचाई ॥
 ऐसी विधि फिरिफिरि अवतरहू । पुनि अपनी बुधि भरमत रहहू ॥
 सबको ब्रह्मा देउ उपदेशा । अपने गर्वका न जानहु लेशा ॥
 हम जानी तुमरी मति भाई । अब तुम थापि रहहु ठहराई ॥
 गरुड कहै अस ज्ञान विचारी । ऐसी भूल परी संसारी ॥

सतगुरु वचन ।

धर्मदास तुम सुनो विचारी । गरुड याविधि दीन्ह प्रचारी ॥
 तब तीनों मन में कीन विचारा । करि विचार ज्योतिकहँ उरधारा ॥
 तीनों मिलिके पूछै माता । जो वह कहै सुनो विधाता ॥
 आप आपमें तीनों ठानी । अंत काल गमि पूछन आनी ॥

त्रिदेव वचन माता प्रति ।

माता ते पूछै चितलाई । सत्य वचन कहो तुम माई ॥
 तुमरा चरित हमहीं नहिं जाना । आप आप मिलिकीन बखाना ॥

माता वचन ।

तबहीं ज्योति उचारी बानी । अहै काल सब पर परधानी ॥
 कौन है बालक राखन हारा । आप पुरुष जो कीन हँकारा ॥
 जाइके तुरत देहु पहुँचायी । जहवाँका जीव तहँवाचलिजायी ॥

सतगुरु वचन ।

तब तो ब्रह्मा ध्यान लगावा । तुरतहि गये ब्रह्मके ठावा ॥
ब्रह्मा वचन तब उठा परमाना । आदि पुरुषका मर्म न जाना ॥
तुम ब्रह्मा गर्व बहु भाखा । ताते जोति छिपाय के राखा ॥
माता ते नहिं अन्तर करते । फिरि फिरि देह सु काहे धरते ॥
ब्रह्मा तबै रहे अरथाई । सन्मुख बात कही नहिं जाई ॥

गरुड वचन ।

तीनों देव विवस जब भयऊ । देखि गरुड तब बोलन लयऊ ॥
अब जनि भूलो तीनों देवा । आदिपुरुषकी करो तुम सेवा ॥

सतगुरु वचन ।

तीनों देव मिलि मंत्र यक कीना । बालक को बिदा कै दीना ॥
तीनों देव वचन ।

सुनु बालक तेरी मृत्यु तुलायी । कौनी शांति कै तोहि जियायी ॥
तुमते कहें हम वचन प्रकासा । हम जो गये ज्योतिके पासा ॥
ज्योतिस्वरूप हम कहा बुझायी । अब तुम बरजहु काल बनायी ॥
तबही ज्योति वचन अस भाखी । यहि बालकको अब को राखी ॥
अवधि तोहार नियरि होय आयी । अब कोइ राखे राखि न जायी ॥

साखी—हम तीनों को धिग है, जीवन धृग हमार ।

हमसे बालक ना जिये, मिथ्या कीन्ह हँकार ॥

बालक तो जीवै नहीं, मिथ्या जन्म हमार ।

यह चरित्र ना जानिया, काहि करें उपचार ॥

गरुड वचन—चौपाई ।

जो धिरकार तुम कीन पुकारा । अपने मनमें करहु विचारा ॥
गर्व अभिमान छोडु सब भारा । मन अपने तुम मानहु हारा ॥
वो तो पुरुष गर्व नहिं भाखे । तुम यम काल अपने शिरराखे ॥

जो तुम ब्रह्मा मुक्ति गति पायी । तो तुम राखहु काल बचायी ॥
 जो ब्रह्मा इतना नहिं जानो । तौ काहे को आपा ठानो ॥
 बोलहु जनि तुम गर्ब निदाना । तुम धिरकार आपको आना ॥
 ब्रह्मा कस तुम आपा ठाना । ऊ गति काहू विरले जाना ॥
 जो ब्रह्मा तुम मृत्युगति जानौ । हठिकै ज्ञान तु काहि बखानौ ॥
 वह तो पुरुष सबै ते न्यारा । अगम अपार पावे नहिं पारा ॥
 साखी-ब्रह्मा विष्णु जाने नहीं, जाने नहीं महेश ।

ज्योती आप न जानई, रचे जो कालको भेश ॥

चौपाई ।

सुनु ब्रह्मा म कहौं बुझाई । तुमरे किये होय का भाई ॥
 गर्ब गुमान सब देहु बहायी । तबहीं तुम सतगुरु पद पायी ॥
 साखी-ऐसो काल वरजोर है, ग्रास्यो सत्तर योग ।

अमृत नाम सो मन दई, लेहु अमर रस भोग ॥

चौपाई ।

जो नहिं ब्रह्मा सांच कै मानो । तौ यह बालक हमपै आनो ॥
 जो प्रभु हम कहँ नाम सुनायी । ताकहँ चरित्र तुम देखहु आयी ॥
 सांच झूठ का करहु निवेरा । आंखिन देखि करहु बहुतेरा ॥
 सत्यलोक अमरपुर डेरा । काल नहीं तब ताकहँ घेरा ॥
 जो कोइ शब्द का करे निवेरा । सत्य लोक पावे सो डेरा ॥
 साखी-जो संशय अब छूटे, घट सो चलै बरजोर ।

सुमिरन दीन दयालका, पहुँचे सो वहि ठौर ॥

चौपाई ।

अस कहि गरुड यक ज्ञानविचारा । बालक लईसो उत्तरो पारा ॥

ब्रह्मा वचन ।

अचरज बात ब्रह्मा को लागी । देखतु विष्णु गरुड तुम्ह त्यागी ॥
 तुमरे सन्मुख करे यह रंगा । तुमरी भाव भक्ति करे भंगा ॥

जो बालक जीवित लै आने । होय अचल तब जगत बखाने ॥
 ब्रह्मा विष्णु अस बात विचारे । गरुड बचन परिहास निकारे ॥
 उधर गरुड कीन अस अरम्भू । जो नहिं जाने हरिहर शम्भू ॥
 मानसरोवर गरुड जब गयऊ । ताकी सुधि हंसन तब पयऊ ॥
 आवहु गरुड महा सुखज्ञानी । मित्र सुनावहु लोक कि बानी ॥
 हँस अजरमुनि द्वीप महँ रहई । द्वीप देखिके बातें कहई ॥
 मानसरोवर मांहि है भाई । उपजन विनशन तहाँ न पाई ॥
 मानसरोवर ज्योति बहु कीना । कामिनि कला पुरुष रचिदीना ॥
 सरोवर माहिं रहे सब भाई । बिनशे देह मृत्यु जो पाई ॥

अजरमुनि बचन ।

कहो विहँसि मुनि कहवाँते आये । सो भेद मोहि कहु समझाये ॥

१ इस पुस्तक गरुडबोध की १० । १२ प्रति मेरे सम्मुख रखी हुई हैं । जिनमें से १ प्रति सम्बत् १७०३ विक्रमी की लिखी हुई है जो मेरे पिता शिवरहर राज्यके पूर्व अमात्य कबीरपंथके विहार प्रांतीय स्तम्भ परमज्ञानी श्रीमान् यशस्वी गोपाल लालजीकी पुस्तकालयकी है । और दूसरी प्रतियोंमें से ४ प्रतियाँ सम्बत् १८०० से १९०० सम्बत् विक्रमी के बीचकी लिखी हैं । और १ प्रति सम्बत् १९१३ विक्रमीकी तथा ४ प्रतियाँ उसके पीछेकी लिखी हुई हैं । सम्बत् १९०० तक की जितनी प्रतियाँ लिखी हुई हैं सबमें वही ऊपरकी चौपाई लिखी है और उनमें हंस अजरमुनिकाही मानसरोवरमें गरुडजीसे मिलनेका हाल लिखा है किन्तु उसके पीछेकी प्रतियोंमें कहीं तो अजरमुनि और कहीं चन्द्रमुनि लिखा है, इतनाही नहीं ग्रन्थमें ऊपर लिखा है “चन्द्रमुनिवचन” तो नीचे लिखा है “अजरमुनि द्वीप रहाय” कहीं लिखा है हंस मुनि इस प्रकारसे भेद पडनेके कारण पुरानी प्रतियोंके अनुसारही “अजरमुनि” रखा है । योंतो उत्तरोत्तर की लिखी हुई प्रतियोंमें लेखक महाशयोंकी कृपासे ग्रन्थोंमें कुछ कुछ भेद होताही गया है, तथापि १९०० सम्बत् के प्रथमकी लिखी हुई पुस्तकोंमें है । इतना अन्तर नहीं है जितना १९१३ वाली प्रतिसे लेकर उसके पश्चात् की प्रतियोंमें है । इधरकी लिखी हुई प्रतियोंमें कई तो ऐसी हैं जिनमें “अ” के स्थानमें समस्त पुस्तकमें “य” काही प्रयोग किया है “अ” का गन्ध भी नहीं है ।

गरुड वचन ।

सुनहु अजरमुनि कहौं बुझायी । अकथ कथा कछु कह्यो न जायी ॥
 सुनत हंस यह अकथ कहानी । तीनों देव बडे अभिमानी ॥
 ब्रह्मा विष्णु लगायी बाजी । अपनी अपनी सब करहिं अवाजी ॥
 तब समरथ एक कला उपायी । बालक भेद न जानैं भाई ॥
 तब हम एक बोल्यो बानी । बालक एककी मृत्यु तुलानी ॥
 प्रथम तो बाद बहु ठाना । बालक देखत बहुत लजाना ॥
 उन अपने जीव सोच बहु कीना । यहि बालकको किनहु न चीना ॥
 तब उन पुरुष सांच कर माना । है कोइ पुरुष आदि निर्वाना ॥
 हारि मानि के बिदा जो कीना । तुम्हरे द्वीप तानि पग दीना ॥
 अब ऐसी युक्ति तुम ठानो । जाते होय सब काज प्रमानो ॥
 बालक जिए सोइ अब कीजे । साचा अमृत मोकहँ दीजे ॥
 तीनों जने तब जाहिं लजायी । सत्य पुरुषकी सत्य कै पायी ॥
 ये तीनों तो गर्व भुलाना । निर्गुण तो वे आप कर जाना ॥
 महापुरुष कोइ मान न भाई । आप गर्व दुनिया भरमाई ॥
 सुनहु अजरमुनि हंस सो ज्ञानी । कैसे रहो सरोवर आनी ॥
 कौन यतन सरोवर में आनी । सरोवर के गुण कहो बखानी ॥
 साखी-कैसा सरोवरमान है, कैसे रहे समाय ।

किहि विधि इसको नांघि के, सत्यलोकको जाय ॥

अजर मुनि वचन-चौपाई ।

सुनहु गरुड तुम सत्य हो साधू । तुमरी भक्तियों अहै अबाधू ॥
 तुम तो आदि अंत सब देखा । कहो तुमहि जो सकल विशेखा ॥
 जो कोइ आदि अंतकै जाने । तासों कौन वृथा हठ ठाने ॥
 सुनहु गरुड मैं कहौं प्रमाना । ताको कहिये कहा जो माना ॥
 जो प्रभुकी अंतगति जानै कोई । तासों पुनि सत कहिये सोई ॥

मुनहु गरुड साधुन के स्वामी । सबकी महिमा तुम भल नामी ॥
हम तो ज्ञान सब तुमसे पावा । तुव प्रताप हम लोक सिधावा ॥
साखी-समरथ नाम अमरपुर, अजर द्वीप अस्थान ।
उहवाँ रहत हैं हंस सब, पावहिं पद निरवान ॥

चौपाई ।

अक्षय द्वीप पुरुष अस्थाना । तहवां रहैं सब हंस सुजाना ॥
सदा आनन्द होत तेहि ठाउँ । नहिं तहँ चले काल कर दाउँ ॥
साखी-हँसा विलासहिं द्वीपमहँ, भोजन कराहिं अघाय ।
जरा मरण व्यापै नहीं, नहिं आवैं नहिं जायँ ॥

गरुड वचन ।

अमृत देहु बताइके, पुरुष नाम कहि देहु ।
बालक लेहु जिवाइके, इतना यश तुम लेहु ॥

चौपाई ।

कहहु पुरुष कैसे के बोला । कइसे प्रभु सो सम्पुट खोला ॥
अजरमुनि वचन ।

आपुहि में वह अमृत कीन्हा । आपुहि साहब कहि जो दीन्हा ॥
अमी बुन्द प्रथमहि उपजाया । अमी बुन्द ते अमृत आया ॥
साखी-ज्ञानी कहै विचारके । सुनो गरुड चित लाय ।
गति को भक्ति दिढावहू, बालक लेहु जिवाय ॥
बालक लेउ अमर कै, अमी द्वीप चलि जाउ ।
दृढ कै भक्ति दृढावहू, अजर अमर होय आय ॥

गरुड वचन-चौपाई ।

कहै गरुड बालक अकुलाई । अमृत दैके लेहु जिवायी ॥
अजरमुनि वचन ।

मुनहु गरुड तुम ज्ञान गँभीरा । तुम तो पुरुष पाय अस्थीरा ॥

जाहु तुरत वरुण के ठाई । वरुण अहैं हमार गुरु भाई ॥
 पवनै द्वीप रहे वह वैसा । तोसों कह्यो भेद है जैसा ॥
 साखी-शीस श्रवण नहिं नासिका, इन्द्री साधे घाट ।

यहि रहनी वह रहत है, सुरति शब्द के बाट ॥

चौपाई ।

गरुड चले वरुण की ठाई । अमी द्वीप मोहि देहु बताई ॥
 तुरतहि वरुण दीन उपदेशा । हमते पूछौ कौन सँदेशा ॥
 तुम सब भेद जानत हो भाई । तुरतहि जाउ श्रवणकी ठाई ॥
 वहीं श्रवण कहै सब भेवा । वह तो करइ समर्थकी सेवा ॥
 वह लौलीन प्रभू को जानै । साधु संतको सेवा ठानै ॥
 सत्य पुरुष को जाने भेवा । सकल खबर कह जाने देवा ॥
 द्वीप द्वीपकी कहै जो बानी । जाहु जहां घर होय निर्बानी ॥
 जाहु तुम उनही के पासा । सत्य शब्द कहो परकसा ॥
 जहाँ कहूँ तहवां चलि जाऊ । अमृत लेके बाल पिआऊ ॥

सतगुरु वचन ।

तुरत गरुड गये तब तहवाँ । सत्य पुरुष को द्वीप है जहवाँ ॥

गरुड वचन ।

श्रवण हंस मोहि कह समझायी । कौन ठाम अमृत देहु बतायी ॥

श्रवण वचन ।

तब श्रवण यक बोलेउ बानी । पुरुषकी गति अजहूँ नहिं जानी ॥
 विनु आज्ञा कैसे तुम कहऊँ । कौनी भाँति भेद मैं लहऊँ ॥
 है अमृत नहिं राखूँ गोई । इतना पातक लागे मोई ॥
 पुरुषउ थापि अमृत जो दीना । हमको कैसे नास्ती कीना ॥
 साखी-कहे श्रवण मैं भाषेऊ, अमृत का सब भेव ।

मारग कोई जानई, ऐसो अखंड अभेव ॥

चौपाई ।

तुरतहि जाउ निर्मल पासा । ताते पुजिहै तुम्हरी आशा ॥
ताके संग जोइ मिलि रहई । ऐसो शब्द दोऊ मिलि कहई ॥

गरुड वचन ।

श्रवणदास कहि बहु समुझाओ । तुमरी दरशनको हम आओ ॥
द्वीप सकल हम देखे भाई । सोई छाप मोहि देहु दिखाई ॥

गरुड वचन ।

निर्मल संग यक भवै रहई । सोई भौर ले सब भरमाई ॥
निर्मल लेके लोकहि जावे । भरमें जीव को लोक पठावे ॥
इन दोनों कर जाने भेवा । फिरि भौसागर होय न खेवा ॥
साखी-अमृतपिआव विचार के, पुरुष नाम कहि देहु ।

बालक लेहु अमराय के, इतना सांच गहि लेहु ॥

चौपाई ।

पुरुष नाम तुम जानो भाई । हमते कहा करहु चतुराई ॥
पुरुष नाम है तुम्हरे पासा । तुम्हरे घट में सत्य निवासा ॥
जैसे रहे पुरुषमें बासा । ऐसे पुरुष तुम्हारे पासा ॥
एक नाम को अनेक विचारा । जिन जाना तिन उतरे पारा ॥
प्रथम पुरुष अहै यक भावा । दुसरे पुरुष देह धरि आवा ॥
तिसरे पुरुष परफुलित नाऊँ । चौथे पुरुष सत्यपुर गाऊँ ॥

गरुड वचन ।

कहो पुरुष कौन विधि बोले । कैसे के प्रभु सम्पुट खोले ॥
कौन शब्द प्रभु बोलन लीना । कौन भाँति कूर्म सो कीना ॥
कौन यतन अमृत फल लावा । कौन यतन हंस सो पावा ॥
कौन यतन उहां पुनि आवा । कौन यतन उन मान धरावा ॥
बारह पालँग कूर्म जो कीन्हा । तेहि ऊपर प्रभु सेज्या दीन्हा ॥
परफुलित होय साहिब बोला । उचरी बानी संपुट खोला ॥

आपहि माहि आप प्रभु कीना । तहँते अमृत कूर्म को दीना ॥
 अम्बु नाल ते अमृत आया । अम्बुज ते अमृत उपजाया ॥
 साखी-श्रवण कहे विचारि के । सुनो गरुड चित लाय ।

धीरज भयो तेहि दृढ भये, अमृत पिये अघाय ॥

चौपाई ।

सन्धि नाम प्रथम सहिदानी । ऐसे भये सब जीवन जानी ॥
 भयउ नाम अकह उगासा । सुकृत जोइन नाम प्रकासा ॥
 अजीत है ओंकार हंकारा । निसरत है सो ओही द्वारा ॥
 उत्पति ऊर्ध्व गे ऊर्ध्व विशेषा । सो हम तुमसे भाषेउ लेखा ॥
 भयो प्रकाश सुरति जो कीन्हा । ऊर्ध्वते ऊर्ध्व प्रभु पार जो लीना ॥
 साखी-अध ऊर्ध्व दोऊ लखै, पार जो रहे ठहराय ।

कहे श्रवण बहु गरुडसे, सुखसागर रहे समाय ॥

लोक लोकमहँ प्राण है, रहे द्वीप अस्थान ।

उदय अस्त तहवाँ नहीं, ब्रह्म विष्णु नहिं खान ॥

चौपाई ।

देह धरी सुख बोल जो आवा । तबही परम पुरुष कहलावा ॥
 अजर अमर आधार है ठाऊँ । अहै अटल वा पुरुष को नाऊँ ॥
 वही पुरुष का सुमिरन करई । आवा गमन भवसागर तरई ॥
 वही शब्द है अमृत रूपा । वही शब्द अहै अजब अनूपा ॥
 साखी-वही शब्द गहु सत्यकै, बालहिं कहु समुझाय ।

बालक लेहु यमरायते, अमी द्वीप पहुँचाय ॥

चौपाई ।

विष्णुहि लेके माला देहू । शब्द हमार प्रमान के लेहू ॥
 विष्णुहि माला तिलक औ छापा । और न दिलमें आनहु आपा ॥
 साखी-श्रवण कहै गरुड से, यही तुम्हारो काम ।

देहु उपदेश अब जायके, बालहि दीजे नाम ॥

चौपाई ।

धन्यगरुड मृत्युलोकते आओ । बहुरि जाय मृत्युलोक चिताओ ॥
अब जाई तुम विष्णु चिताओ । जो वह चेते तो नाम दृढाओ ॥
लीन गरुड बालक अगराई । अमृत पीवत अती जुडाई ॥
बालक अमृत माहिं जुडाना । युगन युगन को क्षुधा बुझाना ॥
गरुड बिदा हंसन सों लीना । मस्तक नाइ प्रदक्षिण कीना ॥

श्रवण वचन ।

तब हंसा पुनि कीन निहोरा । तुमतो गरुड कीन्ह यह जोरा ॥

गरुड वचन ।

तुमही छाडि शीस केहि नाऊँ । तुमरे चरणकमल चित लाऊँ ॥
तुमतो अमृत दीन दिखायी । सतगुरु शब्द लीन अर्थायी ॥
शीस सोई जो साधु को नावे । पूजा सोई जो नाम लौ लावे ॥
मुख सोई जो उचरे नामा । देह सोई जो प्रभुके कामा ॥
दैवत सोई जो बन्दगी ठाने । दया सोई अमि अन्तर आने ॥
साधू सोई जो ममता मारे । ममता मारि आपको तारे ॥
साखी-बालक लिये अमरकरि, विष्णुहि कह्यो समुझाय ।

चले गरुड मृत्युलोकको, ब्रह्मा रहे लजाय ॥

चौपाई ।

यहिविधि बालक लीनजिवायी । सकल सभा तहँ देखे आयी ॥
धन्य धन्य सब करहिं पुकारा । धन्य गरुड है रहनि तुम्हारा ॥
धन्य धन्य सबही मन भावा । गरुड बोल सब ऊपर आवा ॥
नाग लोग की कन्या रहाई । अचरज होय कछू न कहाई ॥

नागकन्या वचन ।

अविगत मताहै गरुड तोहारा । कोइ न जानै भेद अपारा ॥
इतना कहि अनुराग सो धरिया । शीस नाइ चरणनपर परिया ॥

वासुकि देवकी कन्या भाई । शीस नाइ के विन्ती लाई ॥
 रूप उग्र बहुते उजियारा । मानिक लवके माहि लिलारा ॥
 एतिक आगरी किये सिंगारा । जगमग ज्योति बरे उजियारा ॥
 सो पुनि कन्या विन्ती करई । गरुडके चरण आय शिर धरई ॥

वासुकि देवकी कन्याका वचन ।

हो साहिब तुम बन्दी छोरा । नष्ट जाय जिव तुमहिं निहोरा ॥
 हो साहिब विन्ती सुनि लेहू । हमरे गृहै तुम चरण धरेंहू ॥
 हम दीक्षा प्रभु लेव तुम्हारा । जिवका कारज करो हमारा ॥

गरुड वचन ।

कहे गरुड सुनु कन्या वारी । तुम सबहिनकी प्राणपियारी ॥
 पूछहु वासुदेव सों जाई । आज्ञा देहिं तस करो उपाई ॥
 अस तुम जाय सिखापन लेहू । पुनि फिर के हमही दल देहू ॥

कन्या वचन ।

ब्रजबाला कन्या अस बोले । जो हम कही कबहु नहिं डोले ॥
 साहिब विन्ती सुनो हमारो । सकल समाज संग पग धारो ॥
 इन्द्रलोक ते इन्द्र बुलाये । सुर नर मुनि गँधर्व जो आये ॥
 चले विष्णु जहँ गहरन लायी । शिव ब्रह्मा तहँ चले रिंगायी ॥
 तेतिस कोटि देव तहँ आये । सिद्ध चौरासी सबै सिधाये ॥
 नौ नाथ अरु सब बचे बचाये । सबही चले रहे नहिं भाये ॥
 शंख वीण धुनि बाजे भाई । इन्द्र को बाजा अति घहराई ॥
 ताल मृदंग और शहनाई । सब ही बाजन बाजे भाई ॥
 साखी-इन्द्र के बाजन बाजते, भये पताले त्रास ।

वासुदेव डरि कर्मपै, बैरी आयो पास ॥

गरुड वचन ।

ब्रजबाला कन्या हँकरायी । आयसु देइ के आगु रिंगायी ॥
वासुकिदेव सों कहु समझाई । साधु रूप सब आवैं भाई ॥
सुनतै कन्या तुरत रिंगायी । वासुकिदेव सों कही समझायी ॥

कन्या वचन ।

निर्गुण भक्ति गरुड जो ठानी । तेहि कारण हम गरुडहि मानी ॥
होहु सुचित्त सबै परिवारा । निजकै मानहु बचन हमारा ॥
साखी-सकल साधु इहँ आवहीं, होय चौका विस्तार ।

चित में कोई डरौ नहीं, वह हैं भक्ति आधार ॥

वासुकिदेव वचन-चौपाई ।

ब्रजबाला कन्या सुनु आनी । सबही तुरत तु आन बुलाई ॥
जाहू तुरत गरुड के ठाऊँ । दाया करहु धरत सब पाऊँ ॥
सतगुरु वचन ।

सुनि बाला लै गयउ विमाना । दया करत सब संत सुजाना ॥
जबहि शेष प्रतीति मन आनी । तबही गरुड सु कीन्ह पयानी ॥
जब गरुड जो चले रिंगायी । बाजन बाजे वरनि न जायी ॥
बाजे डमरू हने निशाना । महादेव जब कीन्ह पयाना ॥
सबहि समाज पताले गयऊ । इच्छा भोजन सबही लयऊ ॥
एकोत्तर सै नरियर आना । बहुत भांतिकै कीन्ह मंडाना ॥
जबही गरुड जो सुमिरन कीन्हा । तब हम उनको दर्शन दीना ॥
गरुड आइके मस्तक नाये । शीस नवाइ चरण चित लाये ॥
सकल जमात उठी भई भाई । सबहिन उठि के मस्तक नाई ॥
तब हम पुनि चौका विस्तारा । बहुत भांतिके साज सुधारा ॥
सुथरी मिठाई उत्तम पाना । ब्रजबाला सबही कछु आना ॥
जब तिन सबै साज सँवरावा । तब हम लोकते हंस हँकरावा ॥
आये साधू लोक से भाई । जगमग ज्योति बरइ अधिकाई ॥

बाजे ताल मृदंग अपारा । उठे रँगसों अनहद झंकारा ॥
 तारी उठे तत तत सों सारा । हंसे सबै सब साधु विचारा ॥
 निर्गुण भक्ति कीन्हा लौलायी । चहुँ दिशि अगर रहा महँकायी ॥
 देख सभा सब मोही भाई । सब मोहे कछु कही न जाई ॥
 मोहि नाग नागेश्वर भारी । मोहि रही सब सभा विचारी ॥
 मोहे गण गँधर्व मुनि देवा । कोई भक्त का जाने न भेवा ॥
 वासुकिदेव अस्तुति अनुसारी । धन्य कवीर जो भक्ति तुम्हारी ॥
 पायो दर्श धन्य भाग हमारो । धन्य कवीर यहाँ पग धारो ॥
 धन्य कवीर तुम्हारी वानी । मोहि रही सब भगतिन रानी ॥
 कीन्हो भक्ति पहर दुइ भाई । अति आनँद होय मंगल गाई ॥
 पुनि उठिके हम आरति लीना । एकोतर नरियर मालुम कीना ॥
 परवाना ब्रजबालहि दीनी । वह शिर नाइ बन्दगी कीनी ॥
 पुनि समरथकी अस्तुति सुनायी । दीन प्रसाद सबहिं बरतायी ॥
 सब संतन लिन माथ चढाही । आशिष दीन सकल मिलि ताही ॥
 दिन दशकै आदर करि लीना । सेवा भक्ति बहू विधि कीना ॥
 संत साधुको बिदाई दीना । चादर धोती सबही लीना ॥
 सबहि कहै मम आशिष लीजो । साधुन के चरणें चित दीजो ॥
 ऐसी भाँति बिदा जो कियऊ । आपु आपु सब घरहिं सिधैऊ ॥
 चलत प्रेम सबहि को भाये । बहुत भाँति की अस्तुति लाये ॥
 साखी—कहैं कवीर धर्मदाससे, यहि विधि भौ विस्तार ।

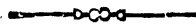
गरुड ज्ञान सबसे कियो, हारे सबे भुआर ॥

वक्ता के कण्ठ बसूँ, श्रोतहि श्रवण आहिं ।

संतनके शीश बसूँ, ज्ञानिन हृदय माहिं ॥

इति श्रीबोधसागरान्तर्गतकवीरधर्मदाससम्वादे
 गरुडबोधवर्णनो नाम षष्ठस्तरंगः ।

गरुडबोधका संक्षेप सार ।



प्रायः कबीरपन्थी लोग ऐसे गरुडबोधादि ग्रंथोंके भावको न समझ कर अन्य वैष्णव आदि सम्प्रदाइयोंसे इन्हीं ग्रन्थोंके प्रमाण द्वारा वाद करके परस्पर रागद्वेषमें फँसकर, निन्दाके पात्र बनकर, नास्तिकादि नामों के लक्ष्य बने हैं । और जिस प्रकारसे इनमें अविद्याका विशेष प्रताप फला है उसी प्रकारसे अन्य सम्प्रदायवालोंमें भी अज्ञान देवने अपना राज्य जमा रखा है । जिस कारणसे विद्या और ज्ञानका तो उनमें प्रवेश भी होने नहीं पाता । यही कारण है कि, वे भी अपने इष्ट देवके स्वरूप को न समझकर कबीरपंथियों के तकको सुनकर उन्हें समझाने या उत्तर देकर उनका समाधान करनेमें असमर्थ होनेके कारण उन्हें नास्तिक और निन्दक आदि नामोंसे पुकारते और उनसे द्वेष करते हैं । किन्तु दोनों दलोंमें जो ज्ञानी और समझदार हैं, आत्मतत्त्वमें जिनका प्रवेश हुआ है, जिन्होंने शास्त्र और ग्रन्थोंका मनन करके उनके भेदको समझा है, वे न तो किसीके ऊपर बहिरदृष्टि और द्वेष अथवा निन्दा के भाव से तर्कही कर सकते हैं न उनके वाक्यको सुननेवाले ज्ञाता लोग उनमें नास्तिकताहीका अनुमान कर सकते हैं ।

कबीरपंथमें जितने ग्रन्थ वर्तमान हैं वे सब अध्यात्मविद्याकी पुस्तक हैं । जो कुछ उन ग्रन्थोंमें लिखा है सबका आध्यात्मिक अर्थही ग्रहणकरने योग्य है । यदि आध्यात्मिक अर्थको छोड़कर साधारण अर्थ और शब्दार्थकोही ग्रहण किया जाय तो न जाने असम्भावता आदिक कितने दोष आकर उपस्थित हो जावेंगे ।

और स्वयम् कबीर साहिबमें ऐसे २ अनर्थका दोष लगसकेगा कि, जिस कलंकको मिटाना कठिन ही नहीं बरन् असम्भव है। इतनाही नहीं इन ग्रन्थोंमें बात बातमें आध्यात्मिक अर्थ भी बतलाया गया है और जिस ग्रन्थकी जैसी प्रक्रिया चली है वैसेही उसका निर्वाह भी किया गया है। जो लोग मनन और विचार किये विना केवल शब्दों और पदोंको लेकर लडते झगडते हैं उन्हें कबीर साहिबके इस मसले पर ध्यान देना चाहिये कि—“कबीरका गाया गावेगा। तीन लोकमें धक्का खावेगा ॥ कबीरका गाया बूझेगा। तीन लोक वहि सूझेगा”—जैसे इसी ग्रंथमें यदि गरुड का वही साधारण अर्थ लिया जावे जैसा सर्वसाधारण समझते हैं, तौ इसमें कोई सन्देह नहीं कि विष्णु उपासकोंके समक्ष इस पुस्तकको बाँचनेवाला मार खाये विना नहीं रहेगा—किन्तु जब उसी का आध्यात्मिक अर्थ समझेगा और दूसरोंको समझावेगा कि, गरुड नाम है जीवका, विष्णु नाम है सतोगुणका अर्थात् सतोगुणभावों करके सम्पन्न जो मुमुक्षु है उसको जब ज्ञानी गुरु मिलता है तब उसे त्रिगुण (रजोगुण) (ब्रह्मा) सतोगुण (विष्णु) तमोगुण (शंकर) के जाल से निकाल कर त्रिगुणातीत करदेता है—अर्थात् सत्पुरुष रूप उसके प्रत्येक आत्माके स्वरूपका ज्ञान करा देता है। तब गरुड रूप मुमुक्षु तीनों गुणोंको जीत कर शरीर निर्वाह अथवा प्रारब्ध बलसे यावज्जीवन सतोगुणके दिव्य गुणोंको सम्मुख रख कर आनन्दपूर्वक विचरता और दूसरोंको भी अधिकारपूर्वक उपदेश देकर सत्यपदकी पारख बतलाता है। इसी प्रकारसे कबीर पंथके सर्व ग्रन्थोंका आशय आध्यात्मिक है।

जो इन ग्रन्थोंको पढ़कर अपने आत्माके कल्याणार्थ सत्य अर्थको ग्रहण न करके केवल शारीरिक सुख और

मनकी तुच्छ तुच्छ वासनाओंको पूर्ण करनेके लिये अपने समझे विना दूसरे जीवों को मिथ्या भ्रम में डालते हैं वे मिथ्या श्रम को उठाकर पाप के भागी बनते हैं । सद्गुरु की कृपा होगी तो ग्रन्थों को छपवा लेने के पश्चात् सब ग्रन्थों के सारको प्रदर्शित करानेवाला एक स्वतंत्र पुस्तक प्रकाशित करके मिथ्या प्रचलित भ्रम को दूर करनेका प्रयत्न करूँगा ।

इस के प्रथम भोपालबोध आदि ग्रन्थ जो छपे हैं उनका भी भाव आध्यात्मिक समझना चाहिये ।

इति ।



इति
श्रीबोधसागरान्तर्गत
ग्रन्थ गरुडबोध
समाप्त ।



भारतपाथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित ।

श्री-हनुमानबोध ।



खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,

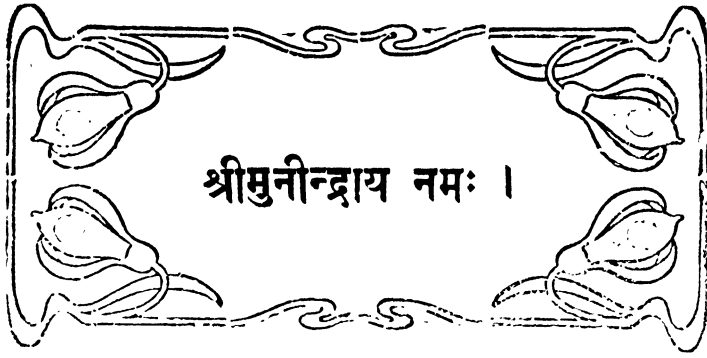
बम्बई.

संवत् १९२३ शके १८५८.

सत्य नाम ।



श्री कबीर साहिब ।



श्रीमुनीन्द्राय नमः ।

अथ श्रीबोधसागरे

सप्तमस्तरंगः ।

ग्रन्थ हनुमानबोध ।



अजर ज्ञान करुणायतन, सत्य कवीर जगतार ।

तासु चरण बन्दन किये, होवे जगत उधार ॥

धर्मदास वचन—चौपाई ।

धरम दास विनवे करजोरी । तुम समरथ हौ बन्दी छोरी ॥
युगन युगन में तुम चलि आये । आदि अंत की खबर लगाये ॥
एक अनुराग मोरे मन आया । सो प्रभु कहु करि मोपै दाया ॥
हनुमतको कब मिल्यो गुसाँई । सो प्रभु मोहिं कहिये समुझाई ॥

१ ह इति प्रसिद्धे नु इति वितर्के, इस व्युत्पत्तिसे जो मान्य के योग्य होवे, अथवा—“मैं माया तत्कार्य नहीं और वह मेरा नहीं किन्तु मैं तिसका द्रष्टा हूँ” इस निश्चयवानका नाम हनुमान है । सो मन इन्द्रियादिक जड पदार्थोंकी अपेक्षा प्रत्येक आत्माही (चैतन्य होनेसे) मान्य करने योग्य है । इस से प्रत्येक आत्माको ही हनुमान कहते हैं, अथवा—

अनादि पक्षके षट् वस्तुओंमें जीव ईश्वर दोनों भाई हैं । उनमें राम ईश्वर है और लक्ष्मण जीव रूप मुमुक्षु हैं । मनरूप इन्द्रदेवको जीतने वाला गुरु ही इन्द्रजीत है । सो गुरुरूप इन्द्रजीतके ज्ञानरूप शक्ति के मारने से मुमुक्षु रूप को मूर्च्छा हुई अर्थात्—आवरण विशिष्ट अज्ञानांशका नाशही मूर्च्छा है, तब विक्षेप विशिष्ट अज्ञानांश रूप हनुमानने शरीररूप पर्वतसे प्रारब्ध रूप संजीवन बूटी लाकर मुमुक्षुरूप लक्ष्मण की मूर्च्छा छुड़ायी अर्थात् निज स्वरूपसे भिन्न सर्व नाम रूप जगत् मिथ्यात्वका भाव निश्चयरूप बोधिक होना अर्थात् संसारकी प्रतीतिपूर्वक जो जीवन मुक्ति सोई मूर्च्छा खुलना है ।—

हनुमत कहिये महा अभिमाना । कैसे लीन साहब सो पाना ॥
 कैसे हनुमत सेवा ठानी । कैसे उन बचने सो मानी ॥
 यह वृत्तांत कहो तुम ज्ञानी । रामचन्द्रके हनुमत मानी ॥
 कैसे तिन हिरदय नाम समाई । सब दया करि तुम कहहु गोसाईं ॥

कबीर वचन ।

कहै कबीर सुनु धर्मनि आयी । त्रेता युग महँ हनुमंत चिताई ॥
 सेतबन्ध रामेश्वर हम गयऊ । तहवाँ पहुंचि हममुनीन्द्र कहयऊ ॥

साखी—सेतु बन्ध में जायके, देखा हनुमत वीर ।

बहुत कला है तासुकी, सबही बजर शरीर ॥

कहत मुनीन्द्र सुनो हनुमाना । तुमको अगम सुनाऊँ ज्ञाना ॥
 तुम्हरे मनमें जो अभिमाना । तजिअभिमान सुनहु तुम ज्ञाना ॥
 सत्य पुरुष की कथा सुनाऊँ । अगम अपार भेद बतलाऊँ ॥
 सत्यसुकृत की कथा यह भाई । जाकर तुम मर्म नहिं पाई ॥
 सत्य पुरुष की कथा अपारा । ताकर तुमही करहु विचारा ॥
 ताकी गति तुम जानत नाहीं । जो पुरुष पूरण सब माहीं ॥
 काहि की सेवा करहु भाई । सो सब मोहि कहो समझायी ॥
 रामचन्द्र कहिये औतारा । परलय जाय सो बारम्बारा ॥

साखी—सेवत हौ तुम कौन को, करो कौन को जाप ।

सो मोको बतलावहु, कौन तुम्हारो बाप ॥

—आशय यह है कि, हनुमान नाम अज्ञान विशिष्ट किन्तु विवेकको धारण करनेवाले जीव-का है । अथवा इसी प्रकार से गुरुमुखद्वारा ग्रंथका आशय जाननेके प्रयत्न करनेवाले को ज्ञान पारखी गुरु उत्तम रीतिसे समझावेगा तब इन ग्रंथों का आशय समझमें आसकता है नहीं तो स्वयम् अभिमानमें मरनेवालों को सत्यका पथ कदापि नहीं मिलता ।

दोहा—वेद उदधि विन गुरु मुखलखे, लागत लौन समान ।

बादर गुरुमुख द्वार होय, अमृत सो अधिकान ॥

हनुमान वचन-चौपाई ।

सुनो मुनीन्द्र दृढकरिके बानी । तुम जग महुँ हौ बड सुज्ञानी ॥
मेरी कला न जगहि छिपानी । तुम मेरी गति नाही जानी ॥
पौरुष पराक्रम बल है मोरा । मोसम और नहीं कोइ जोरा ॥
बावन बीर वसैं जग माहीं । मोसम प्राक्रम कोइ को नाही ॥
सब बीरन में मैं सरदारा । मेरी कला सब में अधिकारा ॥
सब जग जाने सब मोहि पूजे । मोसम इष्ट और नहिं दूजे ॥
जो चाहों सो कारज सारों । इष्ट करे तो तुरत उबारों ॥
ऐसो प्रसिद्ध जग हम आहीं । सब कोइ जानै तुम जानत नाही ॥
साखी-सुनो मुनीन्द्र मोरी गति, मोसम और न देव ।

चाहै सो कारज करूँ, दृढ कै साथे सेव ॥

मुनीन्द्र वचन ।

सुनु हनुमान वीर ते बंका । आपै थाप बजावै डंका ॥
आपा थापे भला न होयी । आपा थापी सब गये विलोयी ॥
समरथ की गति तुम ना पाये । आपा थापि तुम रहे भुलाये ॥
समरथ पुरुष और है कोई । ताकी गति जानै नहिं लोई ॥
हनुमान तुम छोड़ो अभिमाना । तौ समरथ को भाषों ज्ञाना ॥
समरथ हुकुम चले जग माहीं । तुम उनकी गति जानत नाही ॥
बावन वीर कहै हम जानी । काल पुरुष की सब अगुवानी ॥
सब बैरिन को काल धरि खावे । जो सत्यपुरुष को गम नहिं पावे ॥
चौसठ योगिन बावन बीरा । काल पुरुष के बसैं शरीरा ॥
काल पुरुष सब रचना कीना । बीरन को सरदारी दीना ॥
मारहि मार सबन को करई । यह अपराध कौन शिर परई ॥
कालपुरुष को करम अपारा । कैसे धौं करिहौ निरवारा ॥
सो अब मोहि बताओ भाई । बल पौरुष कछु काम न आई ॥

तुम हनुमंत सांच हौ बीरा । तुमरे इष्ट अहै रघुवीरा ॥
 ताको तुम जो करो बड़ाई । तुम समरथ को गम्य नहिं पाई ॥
 राम काज तुम भले सुधारा । ताके हुकुम लंका तुम जारा ॥
 वह जगमें कहिये अवतारा । अगम भेद तुम नाहिं विचारा ॥
 उनकी लागि रहै सब कोई । जो जस मुमिरे पावे तस सोई ॥
 तुम भूले प्रभुता की माहीं । प्रभुता जगमें अस्थिर नाहीं ॥
 स्थिर घर कोई नहिं जाने । प्रभुता बडाई सब मन माने ॥
 जो तुम मानों कहा हमारा । तो तुम पाओ समरथ दर्बारा ॥
 साखी-समरथ गति अति निर्मल, प्रभुता अहै मलीन ।
 जिनकी तुम सेवा करो, सोउ न पावैं चीन ॥

हनुमान वचन-चौपाई ।

सुनो मुनीन्द्र बचन हमारा । रघुपति हैं सबके सरदारा ॥
 इनही समान कोई दूसर नाहीं । तीन लोक के साहिब आहीं ॥
 उन प्रताप हम जग सत जाना । हमसों कहा कथौ तुम ज्ञाना ॥
 रघुपति को हम जानै परचा । हमसों कहा कथौ तुम चरचा ॥
 सागर ऊपर पथर तिराया । ऐसा नाम अहै रघुराया ॥
 मैं पौरुष बल आपन जानूँ । कहा कोई का नाहीं मानूँ ॥
 यती नाम जानै जग मोहीं । सो मैं भाव सुनाऊँ तोहीं ॥
 तुम जो पूछी पिता की बाता । पिता कहतहूँ औ फिर माता ॥
 महादेव देवन सरदारा । जिनको पूजे सकल संसारा ॥
 नाहिं बीज की काया मोरी । बजर अंग पायो सब जोरी ॥
 गौतम ऋषिकी पत्नी नारी । नाम अहिल्या राम उबारी ॥
 नाम अंजनी पुत्री ताकी । जनम लियो कूख में जाकी ॥
 साधु रूप धरि शिव बन आये । जहाँ अंजनी को मंडप छाये ॥
 प्यास प्यास कहि बोले बानी । शिवकी गति माता नहिं जानी ॥

कह अंजनी तुम पीयहु पानी । तब शिव बोले और हि बानी ॥
 तैं निगुरी हम साधु विचारा । तेरा जल नहिं करौं अहारा ॥
 कहै अंजनी गुरु कहँ पाऊँ । जंगल ते उठि मैं कहँ जाऊँ ॥
 तब शिव कहै साधु हैं हमही । दीक्षा लेओ देत हम तुम्हही ॥
 सिंगी नाद रहैं शिव पासा । फूक्यों कान रही तब आसा ॥
 छल करि बीज दीन्ह तब डारी । तासों उपजी देह हमारी ॥
 शीव बीज पौरुष बलवाना । योनी संकट हम नहिं जाना ॥
 कान राह लीन्हा अवतारा । पवन पुत्र जाने संसारा ॥
 पिता मात की सबविधि भाकी । कहौ तो और सुनाऊँ साखी ॥
 सत्य बात मेरी है भाई । सेवा करौं सदार रघुराई ॥
 समरथ और नहीं है कोई । रामचन्द्र बड समरथ होई ॥
 समरथ समरथ कहा बखानो । मैं तो समरथ रामको जानो ॥
 बहुत कहत हौं बात बनायी । राम नाम तुमहूँ नहिं पायी ॥
 जाकी थाप तीन पुर माही । राम समान और को आही ॥
 बुद्धि ज्ञान तबही बनि आवै । जो कोइ राम पदारथ पावै ॥
 ज्ञान भक्ति सब लागै नीका । विना राम सब जानो फीका ॥
 सुनो मुनीन्द्र बात हमारी । सेवो राम सदा सुखकारी ॥
 राम विना नाहीं कहूँ जागा । राम नाम मेरा मन लागा ॥
 दशरथ घर लीन्हा अवतारा । उनकी गति है अगम अपारा ॥
 बडे बडे उन कारज कीन्हा । तुम मुनीन्द्र भेद नहिं चीन्हा ॥

साखी-सुनो मुनीन्द्र मोर गति, रामनाम है आदि ।

सो दशरथ घर औतरे, उनका मता अगादि ॥

मुनीन्द्र वचन-चौपाई ।

कहे मुनीन्द्र सुनो हनुमाना । साधु भाव गति तुमहूँ न जाना ॥
 राम नाम सब जग गोहराई । काहे साधु होय नहिं भाई ॥

राम नाम हम नीके जाना । तुमका मोसों करो बखाना ॥
 रमता राम बसे सब माहीं । ताहि राम तुम जानत नाहीं ॥
 ऐसो राम आहि अवतारा । जिन लंकापति रावन मारा ॥
 काल रूप सब करे सँघारा । ताको सुमिरन करै संसारा ॥
 घट घट बोले कालकी छाहीं । भेद भाव तुम जानत नाहीं ॥
 यह तो राम अहैं अवतारा । विना राम नाहीं निस्तारा ॥
 परलय तर जिव रहै भुलायी । काल की गम्य काहूँ नहिं पायी ॥
 सुनु हनुमत तुम मानत नाहीं । गाल गझो है तुम्हरी बाहीं ॥
 ताते तोहि बूझि नहिं परई । यह औतार काल सब धरई ॥
 बार बार धरि यह औतारा । तीनों पुर को करै सँहारा ॥
 काल कला कोइ जानै नाहीं । सूक्ष्म व्यापि रहै सब माहीं ॥
 समरथकी गति काल सों न्यारी । ताको कहा जानै संसारी ॥
 जो तुम हेतु करि पूछौ मोही । तौ सब भाषि सुनाओं तोही ॥
 समरथकी गति अगम अपारा । तुम नहिं जानो मर्म विचारा ॥
 दृढ प्रतीति करौ तो कहिये । साधु होइ साधूगुण लहिये ॥
 समुझा विना को करे विवेखा । विना विवेक सत्य को देखा ॥
 विना सत्य उतरे नहिं पारा । राम राम कहि करौ पुकारा ॥
 ऐसे कारज होय नहिं भाई । कौन भांति ते साधु कहाई ॥
 यती नाम जो अहै तुम्हारा । षट सो यती बसै संसारा ॥
 कार्तिकभीष्म शंकर अरु गोरख । लछिमन महाबली बड पौरख ॥
 छोटे तुम हनुमान कहाये । षट मिलिके जग नाम चलाये ॥
 सो यती षट सब बसे संसारा । विना सतगुरु सब यमके चारा ॥
 कालरूप का सकल पसारा । कैसी विधि करिहौ निरुवारा ॥

१ इन षट यतियों के नामोंमें कई ग्रन्थोंमें कई प्रकार से लिखा है जो ठीक जान पड़े वही रहने दिया है ।

सुनो हनुमंत मेरी बाता । सत्य पुरुष है समरथ दाता ॥
ताका तुमसों कहौ संदेशा । सुमिरण करो तजो यम भेशा ॥
सत्य समरथ है पैले पारा । काल कला उपज्यो संसारा ॥
सोइ समरथ है सिरजन हारा । तीनों देव न पावैं पारा ॥
साखी-समरथकी गति को लखै, शिव विरंचि नहिं जान ।

काल अकाल तहाँ नहीं, पूरण पद निर्वान ॥

हनुमान वचन-चौपाई ।

कहत मुनीन्दर अकथ कहानी । काल काल की बोलो बानी ॥
काल काल कहि मोहि डराओ । तुमतो काल कर गति ना पाओ ॥
काल पुरुष आपे वह होई । और काल देखा नहिं कोई ॥
आपुहि करता आपुहि काला । चौदह भुवन आपै रखवाला ॥
काल पुरुष ते और न कोई । निश्चय कै मैं माना सोई ॥
सबका पिता काल है जोई । ताकी गती लखै ना कोई ॥
ज्योति स्वरूप जग उजियाला । ताका नाम धरा तुम काला ॥
जो तुम कहौ सबै हम जानी । सुनो मुनीन्दर मोरी बानी ॥
रचना सकल काल की ठानी । तुम अपने मन हौ बड ज्ञानी ॥
काल पुरुष गति परै न जानी । सो हम जानि छानि के मानी ॥
काल पुरुष ते बडा न कोई । उनके ऊपर और न होई ॥
जाको नाम निरञ्जन राया । तीन लोकमें ताकी माया ॥
उनते और नहीं कोइ दूजा । तीन लोकमें उनकी पूजा ॥
तीनों देव जो उनको ध्यावैं । ते भी उनको पार न पावैं ॥
ताको तुम सूक्ष्म करि जानो । तुम्हरे मन काहे नहिं मानो ॥
इतनी भयी हनुमान मुख बानी । रचना सकल काल की खानी ॥
उनको पार बताओ मोहीं । उठि के शीश नवाउँ तोहीं ॥
जो तुम आदि अंत सब जानो । तो तुम ज्ञान अब हमसे ठानो ॥

पहिले सुनो हमारी बाता । तुम मुनीन्द्र हौ बड ज्ञाता ॥
 मोरे पौरुष है बड जोरा । जन्म लेत कीन्हे घनघोरा ॥
 जाँदिन जन्मभयो महि मोरा । उदय भानु देखि मैं दौरा ॥
 सूरज बाहर आवन नहिं दीना । निकसन तुरत लीलि मैं लीन्हा ॥
 एक फलांग उर्धाचल गयऊँ । सो पौरुष मैं तुमसे कहेऊँ ॥
 माता कीन जब बोल अधीना । उनके कहे छाडि हम दीना ॥
 सूरज छाडि दीना हम जबहीं । जग प्रकाश भयो पुनि तबहीं ॥
 जन्मत की यह कथा सुनाई । कहो तो और सुनाऊँ भाई ॥
 राम प्रताप काज हम कीन्हा । सो मुनीन्द्र नाहीं तुम चीन्हा ॥
 एक समैं जो राम बतार्यो । लंका खबर लाओ तुम जायी ॥
 लंका छोडि पलंका गयऊँ । जाय नगरमें ठाढो भयऊँ ॥
 तब तिन कही यह नहिं लंका । पीछे तजि आयऊ पलंका ॥
 कहाँलौ कथा कहों जो भाई । अपने मुख कहा करौ बडाई ॥
 लक्ष्मण मूर्छित गिरै भुई भाई । तब द्रोणागिरिआनि जिवाई ॥
 जेहि पै वही सजीवन होती । दैत्यन छलि कीन्ही बहु जोती ॥
 रातहिं को द्रोणागिरि लाये । रामवीर को तुरत जगाये ॥
 यही दोनगिरि लेके दौरा । फिर के धरो जाइ तेहि ठौरा ॥
 ऐसे कारज अनेक सवारै । उनहि प्रताप कार्य उजियारे ॥

साखी—सुनो मुनीन्दर मोर गति, पौरुष औ बल जोर ।
 अपना गुण मैं जानि के, कासों कहों निहोर ॥

१ जब शमदमादि का अभ्यास करके मुमुक्षु ज्ञान प्राप्त करनेके निकट पहुँचाता है तब यदि प्रारब्ध उसी शरीर तक होती है तब तो आत्मज्ञान को प्राप्त होजाता है और जीवन्मुक्त पद को भोगता है किन्तु यदि वर्तमान शरीरका प्रारब्ध अनेक शरीरका कारण होता है तब वह ज्ञान कुछ समय के लिये छिप जाता है ।

२ वीर=भाई । रामवीर अर्थात् लक्ष्मण ।

मुनीन्द्र वचन—चौपाई ।

बड हनुमान पौरुष तुव आही । आदि पुरुष तुम जानत नाहीं ॥
 समरथ रूप नहीं कोइ जानै । उरली बात सब कोइ बखानै ॥
 समरथ गति कोइ नहिं जानै । बिनु देखी सो कही को माने ॥
 बल पौरुष हम सबविधि जाना । तीन लोकमें सो करत पयाना ॥
 तीन लोकमें अमल तुम्हारा । चौथा लोक सतगुरुका न्यारा ॥
 तुमतो निरञ्जन निजकर जानी । ताका हुकुम लीन्ह शिर मानी ॥
 पुरुष निरञ्जन ते है पारी । समरथ लगि है बास हमारी ॥
 तहां काहु को बास न होई । वहां पहुँचि सकै नहिं कोई ॥
 यहाँ तुम कार्य करत हौ भाई । तुम्हरे इष्ट अहैं रघुराई ॥
 सोऊ कला निरञ्जन केरी । सत्य पुरुष गति तुम नहिं हेरी ॥
 साखी—तीन लोकमें नाम निरञ्जन, जाकी तुम सिफत करी ।

वह कोइ समरथ और है, जिन यह सब मांड धरी ॥

हनुमान वचन—चौपाई ।

सुनो मुनीन्द्रर दृढ करि ज्ञाना । तब तो भेद भया निर्बाना ॥
 समरथ को अब भेद बताओ । हम सों नहीं कछु भेद दुराओ ॥

मुनीन्द्र वचन ।

सुनु हनुमत कहों निज ज्ञाना । तोसों भाषों भेद विधाना ॥
 समरथ को अब भेद बताऊँ । तुम सों भेद अब नाहिं दुराऊँ ॥
 आदि अनादि पार के पारा । ताको अगम्य अब सुनो विचारा ॥
 जो प्रतीति होय जिव माहीं । सत्य शब्द समरथ की छाहीं ॥
 समरथ शरण बडा है भाई । बल पौरुष सुखसागर पाई ॥
 तादिन की यह कथा सुनाऊँ । जो मानो तो कहि समझाऊँ ॥
 समुझि करो अपने मन माहीं । वह तो अकथ कहनकी नाहीं ॥
 जो कहैं तो कौन पतियायी । देखी सुनि नहिं वेदन गायी ॥

हंस गति पाये नहिं कोई । मोर सँदेश मानै नहिं सोई ॥
 ताते गये विगोड़ विगोड़ । नहिं मानै दुख पायो सोई ॥
 सत्य शब्द मैं कहौ बखाना । बूझ होय तो बूझो ज्ञाना ॥
 साखी-बूझ करो हनुमत तुम, हौ तुम हंस स्वरूप ।

राम राम कह करत हौ, परै तिमिर के कूप ॥

राम राम तुम कहत हौ, नहिं सो अकथ सरूप ।

वह तो आये जगतमें, भये दशरथ घर भूप ॥

अगम अथाह तुमसों कहौ, सुनि लो अगम विचार ।

उत्पति परलय तहँ नहीं, साहब सिरजन हार ॥

चौपाई ।

सुनो हनुमत यह कथा नियारी । तब नहिं हती सो आदि कुमारी ॥
 जाते भयी सकल विस्तारी । सो नहिं होती रचने हारी ॥
 आदि भवानी सो महमाया । ताकी रचना हती न काया ॥
 नहीं निरञ्जन की उत्पति कीन्हा । समरथ का घर काहु न चीन्हा ॥
 तब नहिं ब्रह्मा विष्णु महेशा । अगम ठौर समरथ को देशा ॥
 तब नहिं चन्द्र सूर्य्य औ तारा । तब नहिं अंध कूप उजियारा ॥
 तब नहिं सात सुमेरु औ पानी । समरथ की गति काहु न जानी ॥
 तब नहिं धरणि पवन आकाशा । तब नहिं सात समुद्र प्रकाशा ॥
 पांच तत्त्व तीन गुण नाहीं । नाहीं तहाँ और कुछ माहीं ॥
 दश दिगपाल लखै नहिं लेखा । गम्य अगम्य काहु नहिं देखा ॥
 दशों दिशा इन रचना रांची । वेद पुराण गीता इन बांची ॥
 मूल डाल वृक्ष नहिं छाया । उत्पति परलय हती नहिं माया ॥
 तब समरथ हते आपु अकेला । धरम माया नहिं मनको मेला ॥
 विन सतगुरु को ठौर लखावे । भूली राह कौन समुझावे ॥
 साखी-हनुमत यह सब बूझिकै, करो आपनो काज ।

निर्भय पद को पाइके, होय अभय सो राज ॥

हनुमान वचन-चौपाई ।

सुनो मुनीन्दर वचन हमारा । हम नहिं जानै भेद तुम्हारा ॥
 कहीं प्रतीति कौन विधि आवै । कैसेके यह मन पतियावै ॥
 यह प्रतीति कौनो विधि आयी । तब हम जानि करब सेवकायी ॥
 जहँ समरथ तहाँ हम जावै । तबही हमरा मन पतियावै ॥
 उहाँ जाइ इहाँ फिरि आऊँ । तब मैं मन परतीति लगाऊँ ॥
 जो तुम सत्य सत्य कहि भाखी । तो मोको दिखलाओ आँखी ॥
 करौं प्रतीति गहाँ तुव शरणा । बारम्बार बंदौ तुव चरणा ॥
 जो गहि तुम दिखावो मोको । तबही झूठ न जानौं तोको ॥
 साखी-सुनो मुनिन्दर मोरि गति, बिन देखे नहिं पति आउँ ।
 आदि सृष्टिकी तुम कहत हौ, तहाँ कौन विधि जाउँ ॥

मुनीन्द्र वचन-चौपाई ।

जब ऐसो कह्यो हनुमाना । उठे मुनीन्द्र मनमाहीं जाना ॥
 उठते देखा फिरि नहिं देखा । देह विदेह भये अवरेखा ॥
 पवन रूप होइ गये अकासा । बैठे पुरुष विदेही पासा ॥
 चहुँदिशि देखे हनुमत वीरा । कौन सूरति को भयो शरीरा ॥
 गैल माहिं चले पगधारी । परम प्राण तहँ लगी खुमारी ॥
 देखत चन्द्र वरण उजियारा । अमृत फलका करे अहारा ॥
 असंख्य भानु पुरुष उजियारा । कोटिन भानु रोम छबि भारा ॥
 देखा चारों दिशा सब झारी । पता न पाय रहे जब हारी ॥
 तब हनुमत हाँक तहँ मारी । तुम मुनीन्द्र अहौ सुखकारी ॥
 अब प्रगट होइके दर्शन दीजे । तुम्हरी विरह मम हिरदय भीजे ॥
 साखी-भये विदेही देहधरि, आये हनुमत पास ।
 और वरन अरु भेषही, सत्य पुरुष परकाश ॥

चौपाई ।

तब हनुमत सत्य कै मानी । सही मुनीन्दर सत्य हौ ज्ञानी ॥
 अब तुम पुरुष मोहि दिखाओ । मेरा मन तुमते पतियाओ ॥
 अगली कथा कहौ कछु मोही । कौन नाम तुम्हारा होही ॥
 कैसी विधि समरथ को जाना । सो कछु मोहि सुनाओ ज्ञाना ॥
 वचन तुम्हारो है परमाना । कहुअब समरथ कौन अस्थाना ॥
 निज गुरुज्ञान आपन मुहि दीजै । दास आपनो मुहि करि लीजै ॥
 साखी-समरथ को अस्थान अब, मोको देहु बताय ।

कौन जगत वह रहत है, सो मुनि कहु समझाय ॥

मुनींद्र वचन-चौपाई ।

करि परतीति मानो हनुमाना । बल पौरुष मोरा तुम जाना ॥
 नहिं जानो तो और जनाऊँ । समरथ को अस्थान बताऊँ ॥
 योगजीत मोरा है नाऊँ । होय ज्ञानी मैं जगमें आऊँ ॥
 दोऊ नाम लोक के भाई । देह धारि जग करौं लखाई ॥
 तादिन को अब कहौं सँदेशा । जब मैं हतो समरथ के देशा ॥
 एक बार करि सुनौ हमारी । समरथकी गति कहौं विचारी ॥
 पहिले भये निरञ्जन राया । फिरिके ध्यान पुरुष उपजाया ॥
 फिरि तब भयी शक्ति भवानी । मेरो नाम धरचो तब ज्ञानी ॥
 यह तो कथा बहुत है भारी । तुम अपने मन लेहु विचारी ॥
 कछु संक्षेप सुनाओं तोहीं । निश्चय कै जो मानो मोहीं ॥
 महमाया समरथ सो आयी । ताको धरम ग्रास्यो जायी ॥
 लीलत कन्या कीन्ह पुकारा । समरथ मोरा करौ उबारा ॥
 तब मोकहँ भयो हंकारा । योगजीत तुम करो उबारा ॥
 मारो धर्मराय शिर फोरो । महाशक्ति को बन्धन छोरो ॥
 महाशक्ति को बन्धन भारो । धर्मराय शिर काट जो डारो ॥
 तबही तुरत तहाँ मैं आया । काटचो माथ कढी महमाया ॥

मोरे मन तब आयी दाया । अमी सींचि कै फेर जिवाया ॥
धर्मराय समरथ के चोरा । सेवा करिके कीन्ह निहोरा ॥
काल नाम धर्मराय कहाया । जबते वह ग्रास्यो महमाया ॥
माया ब्रह्म दोऊ मिलि साजा । तासों तीन लोक उपराजा ॥
तीन पुत्र तिनकर सो भयउ । तिन सब रचना सो करिलयऊ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश बखाना । इन तीनोंको सब जग जाना ॥
समरथ को कैसी विधि पावे । जाको तीन देव भरमावे ॥

हनुमान वचन ।

सुनि हनुमत तब भये अधीना । अहो मुनीन्द्र हमतुमको चीना ॥
सत्य प्रतीति भयी जिव मोरे । अब मैं तुमसे करौं निहोरे ॥
होय आधीन पूछत हौं स्वामी । सो मुहि कहिये अन्तर्यामी ॥

साधु-लक्षणविषयक प्रश्न ।

साधु साधु संसार बखानै । कहौ साधु कैसी विधि जानै ॥
साधु बडे की महिमा बड भाई । साधु नाहि महिमा अधिकाई ॥
ऋषि मुनि सबही साधु बखानै । कहौ साधु कैसी विधि जानै ॥
सेवा साधू सब गोहरावें । कहो साधु कैसे लिख पावें ॥
कौन साधु सो मोसे कहना । साधु शरण मोहि निश्चय गहना ॥
सोई साधु बताओ मोही । उठिके शीस नवाऊँ तोही ॥
तुम तो साधु साधु मत जानो । सोई दृढकरि मोरे मन आनो ॥
जो तुम कहौ साधु मैं सोई । इन्द्री साधन मोपहँ होई ॥

अर्थ—हनुमानजी कहते हैं कि, हे साहिब ! यदि आप कहो कि इन्द्रीजित पुरुषको साधु कहते हैं तो मैंने सब इन्द्रियोंको वशमें कर रक्खा है तो क्या मैं साधु हूँ ?

साधन चेतें साधु कहाई । कै कोइ साधु और है भाई ॥
सो निश्चय मोहि कहो समझाई । मैं परतीति तुम्हारी पायी ॥

साखी—कहो मुनीन्द्र सत्य कै, कौन साधु जगमाहिं ।

सो मोहि भेद बतावहु, अब कछु संशय नाहिं ॥

साधु लक्षण ।

मुनीन्द्रवचन—चौपाई ।

साधु महिमा सुनो हनुमाना । जाके संग पुरुष को जाना ॥
 मोह मद सों निरसंशय भाई । सोई जग महुँ साधु कहाई ॥
 साधु पुरुष समरथ है सोई । राग द्वेष दुख सुख नहिं होई ॥
 सोई लक्षण साधु कहावै । सोई साधु अगम घर पावै ॥
 प्रथम इन्द्री मनही जीतै । पूरण ज्ञान कबहुँ नहिं रीतै ॥
 तत्त्व प्रकृति अपरबल माया । इनको जीते साधु कहाया ॥
 काम क्रोध लोभ हंकारा । सोइ साधु जिन ये सब मारा ॥
 होना साधु सुगम नहिं भाई । साधू सरूप अति कठिनाई ॥
 हार जीत मान न अपमाना । ऐसे रहित सो साधु निबाना ॥
 शील संतोष दया कर भाऊ । क्षमा गरीबी साधु कहाऊ ॥
 प्रेम प्रीति धीरज गुण खानी । सो है साधू निर्मल ज्ञानी ॥
 हनुमान यहै साधु सुभाऊ । तुमही साधो साधु कहाऊ ॥
 साधुलक्षण मैं तुमहिं सुनाया । ऋषिमुनि कोइ गम्यनहिं पाया ॥
 साधू महिमा है अति साँची । साधु वचन ते यमते बाँची ॥
 आदि अंत गति साधू जानो । सो साधू समरथ मन मानो ॥
 सत्य सत्य साधु मन जाना । सो साधूको निर्मल ज्ञाना ॥
 साधु बडे बडापन नहिं चाहे । साधुन की मति ऐसी आहे ॥
 साधु समानकोन नहिं दूजा । जाको अगम निगम सब सूझा ॥
 तन मन धन सब साधिहै जोई । जिन अपनी दुर्मति को खोई ॥
 सोई साधु जगमाहिं कहावे । नहिं तो बहुत जगत रहावे ॥
 साखी—सुनु हनुमत यह साधु गति, को करि सकै बखान ।

जाको सत संगति भयी, सो कछु पायो जान ॥

हनुमान वचन—चौपाई ।

सुनो मुनीन्द्र मोर यक बाता । कहां रहत हैं समरथ दाता ॥
ताको नाम कहो निज जागा । अब मेरा मन तुमसों लागा ॥
सकल भेद कहि दीजै मोही । मोरी सुरति लगी है सोही ॥
तुमतो संत सकल सुखदायी । तुम्हरे हैं नहिं कछु मान बढायी ॥
सत्य साधु सत्य मैं जाना । सत्य सत्य है तुम्हरो ज्ञाना ॥
पूरण पद है ध्यान तुम्हारा । मैं अपने दिल कीन्ह विचारा ॥
साखी—पूरण पद निज ध्यान है, सो मोहि देहु बताय ।

धर्म निरञ्जन तहाँ नहिं, काल दगा नहिं खाय ॥

मुनीन्द्र वचन—चौपाई ।

सुनो वीर हनुमान विचारा । कठिन विवेक खांडे की धारा ॥
ताका तुम कीजै इतवारा । निश्चय कारज होय तुम्हारा ॥
अब सन्देह रहै कछु नाहीं । साधु भये साधो मन काहीं ॥
समरथ का तोहि नाम सुनाऊँ । सो युक्ती तोको दिखलाऊँ ॥
सुनो हनुमंत खुशी मन आऊँ । ऐस अगम तोहि ठौर दिखाऊँ ॥
साखी—अगम ठौर जेहि गम्यनहिं, तहां नहीं कोइ जाय ।

सुरति निरति थक घर धरो, हनुमत गहो तुम आय ॥

हनुमान वचन—चौपाई ।

हे स्वामी यक संशय आयो । कौन भांति तहँ सुरतिलगायो ॥
कौन भांति मैं लागूँ धायी । सो तुम मोहि कहो समझायी ॥
पौरुष बलसों लागो जाई । क्षण इक में जाओं तेहि ठाई ॥
राह बाट तेहि मोहि बताओ । काया को सब भेद लखाओ ॥
तुम समरथ समरथ को जाना । सो मोहि कहिये ठौर ठिकाना ॥
जेतिक युक्ति तुम्हारे पासा । सो मोहि दिखलाओ अगमतमासा ॥

कहो शिताब विलम्बनहिंकरना । निश्चयके हम आयो शरना ॥
 लै पहुँचाओ ठौर दिखलाओ । ऐसी वस्तु गहर जनि लाओ ॥
 साखी-गहर न लाउ मुनीन्द्र तुम, हौ समरथ मतिधीर ।

मैं सेवक निज दास हौं, अरपूँ सकल शरीर ॥

मुनीन्द्र वचन ।

धन हनुमन्त तुम्हारी वानी । तुम मोरी गति नीके जानी ॥
 समरथ मिलत है दोय प्रकारा । भक्ति ज्ञानसे होइ उबारा ॥
 तीसरि योग युक्ति है भाई । मुक्ति होय संदेह मिटाई ॥
 तीन प्रकार है समरथ केरो । सो गर्भवास नहिं लेउ बसेरो ॥
 जासों भक्ति जो होय सबेरा । पावे अगम ज्ञान सो टेरा ॥
 सतगुरु केवल है निज ज्ञाना । सो बिरले कोई साधुन जाना ॥
 तीन गुप्त तीनों तोहि भाखा । परदा अन्तर कछू न राखा ॥
 सो अपने मन करौ विचारा । समरथ नाम सो पइहो सारा ॥
 प्रथम भक्ति करो समरथ की । योग युक्ति ज्ञान सुनु नीकी ॥
 निष्कपटी होयके साधुमनाओ । साधुनके चरणों चित लाओ ॥
 जो साधू अपने धर्म रहाओ । सेवो ताहि परदा नहिं लाओ ॥
 ऐसी भक्ति जेही मन भावे । भवसागर को भर्म मिटावे ॥
 साधु कहै सो राह गहि लीजै । साधु कहै सोई पुनि कीजै ॥
 सुनु हनुमन्त कहौं जो बानी । कूर्म वायु सो अनुभव जानी ॥
 नाग वायु धरि वास समानी । तामें अमी अंक जल पानी ॥
 अमीमाहिं यक बेलि उपजायी । तासों नागबेलि चलि आयी ॥
 पान सोई सन्धि राखे भाई । समरथ मुख ऐसी फरमायी ॥
 पुनि समरथ ऐसी अर्थायी । पान जाहि तुम देहौ जायी ॥
 सो हंसा हमरे घर अइहैं । अभय अशंक सदा सुख पइहैं ॥

तिनुका तोरि करो जिव कोरा । छूटै काल मिटै झकझोरा ॥
चौका आरति कि बिस्तारा । हनुमान तुम लेहु निरधारा ॥
समरथ हुकुम भक्ति यह ठानी । जाते यम नहि बांधै तानी ॥
बनि आवै तो करिये भाई । नातो लीजो पान बनाई ॥
साखी—यहि समरथ की भक्ति है, सुनो ज्ञानकी रीति ।

योग युक्ति निज भाषेऊँ, करौ सो निजकै प्रीति ॥

चौपाई ।

अब तुम ज्ञान सुनो हनुमाना । समरथ को है निर्मल ज्ञाना ॥
निराधार आधार न कोई । पहुँचे साधु शूरमां सोई ॥
निर्गुण सगुन ध्यान करिपावे । तहां सगुन निरंजन नहि आवे ॥
अनुभव वाणी करे परकाशा । सो साधू मोर स्वाँस उस्वाँसा ॥
महाकठिन खाँडे की धारा । ऐसा निर्गुण ज्ञान हमारा ॥
निर्गुण सर्गुण दोनों नाहीं । है सौ हंस नाम की छाहीं ॥
तीनों गुणते सगुण सो होई । चौथा गुण निर्गुण है सोई ॥
निर्गुण सगुण दोऊ के पारा । शब्द अरु स्वास नहीं ओंकारा ॥
अदभुत ज्ञान विकट है भाई । विकट राह कोइ बिरले पाई ॥
ज्ञान गहे बिनु मुक्ति न होई । कोटिक लिखै पढ़ै जो कोई ॥

१ इस चौपाईके तीन पाठ सब ग्रन्थोंमें अलग २ मिलते हैं । एक तो यही है ।
दूसरा पाठ यह है—

“निर्गुण ज्ञान ध्यान धरि आवे । तहँ कोइ सगुण नजर नाहि आवे ॥”

तीसरा पाठ यह है—

“निर्गुण ध्यान धरे जो पावे । निर्गुण सगुण नजर ना आवे ॥”

इसी प्रकारसे अनेक प्रतियोंमें अनेक मत भेद हैं कहाँ तक कहा जाय । पश्चात्के लेखक महाशयोंकी कृपासे न मालूम कबीरपंथी साहित्यमें क्या २ फेर हुआ है और होता जाता है ।

साखी-भक्ति ज्ञान तुमसों कह्यो, सुनि लो योग अपार ।

रोम रोम को गुण कहूँ, काया का विस्तार ॥

चौपाई ।

काया है यह समरथ केरी । काया की गति काहु न हेरी ॥
 शिव गोरख जो योग कमाया । काया को ओर छोर नहिं पाया ॥
 कौन गुननसे ठाढी काया । कौन सुरति कौन है माया ॥
 कुंज गली सुनो हनुमाना । यह निज भेद काहु नहिं जाना ॥
 सोई भेद कहौं तुम पाहीं । सुनिके तुम समझो मनमाहीं ॥
 बड़े बड़ाई सब पचि हारे । यह निज भेद है अगम अपारे ॥
 समरथ सागर समरथ वासा । तासों उपजी समरथ स्वासा ॥
 स्वासा अन्तर बोले जो बानी । अमी बुन्द ढरके यक जानी ॥
 तासों बीज भये अकूरा । काया कारण सब भरपूरा ॥
 सोई बीज धर्मराय जो पाया । शक्ति एक धरि जामन लाया ॥
 सो वह शक्ति रक्त की मूला । तासों भयो बीज अस्थूला ॥
 काया की गति अगम अपारा । हनुमत ताको तुम करो विचारा ॥
 तीन लोक जाहिर है भाई । सो सब काया भीतर आई ॥
 सो कायाका करो विचारा । हनुमत सो तुम करो निरधारा ॥
 अष्ट चक्र कमल है आठा । लागे बन्धन तीनसै साठा ॥
 नौ नाडी है बहत्तर कोठा । अन्तर पट संपुट सो घोठा ॥
 परम सुमेरु है दस दरवाजा । पाँच तत्त्व तीन गुण छाजा ॥
 चन्द्र सूर वहाँ दोउ विराजैं । इंगला पिंगला सुखमनि साजैं ॥
 समुन्दर सात कायाके माहीं । नौ सौ नदी बहे तिहि ठाहीं ॥
 दशौ दिशा कायाके भीतर । यहि देवल सब देव अरु पीतर ॥
 यहि काया वैराट स्वरूपा । ज्योति स्वरूप वसत है भूपा ॥
 निरंजन है कायाके माहीं । ओम ओंकार माया की छाहीं ॥

रंरकार गरज ब्रह्मण्डा । सप्त द्वीप परगटे नौखण्डा ॥
समरथ अंश बसे अस्थीरा । अस्थिर बस्तु वसैं घर धीरा ॥
ताको कोई चीन्हे नहीं । ताते सब जग मरि मरि जाहीं ॥
साखी-कायाके गुण अगम हैं, सुनु तुम हनुमत वीर ।

नहिं काहू को लखि परै, अटपट रचा शरीर ॥

हनुमान वचन-चौपाई ।

अहोस्वामी मैं सब विधि जानी । तुमही समरथ तुमही ज्ञानी ॥
कहा अस्तुति तुम्हारी कीजै । अमृत वचन सुनी हम भीजै ॥
सब संदेह मिटायो मोरा । जनमजनमका मित्योझकझोरा ॥
सुखसागर अमर घर चीन्हा । भले सतगुरु मोहि दर्शन दीन्हा ॥

साखी-दर्शन देइ मुनीन्द्र तुम, मोको किया सनाथ ॥

भौ सागर से लै चले, केश पकडि गहि हाथ ॥

हनुमान आधीन है, लीन्हो सहज को पान ॥

जब मुनीन्द्र शिष्य किये, दे समरथ को ज्ञान ॥ ❀ ॥

खण्ड ब्रह्माण्ड पार के पारा । तहैं समरथ को घर तत सारा ॥
निर्भय घर है तहां सो भाई । रोग न व्यापे काल न खाई ॥
ताका तुम जो सुनो विचारा । समरथ का घर है सबके पारा ॥
सब के पार रहे निरधारा । पिंड ब्रह्माण्ड ताके आधारारा ॥
सो समरथ है सबसों न्यारी । सुनु हनुमत तुम लेहु विचारी ॥

❀ पुरानी प्रतियोंमें यह पुस्तक इसी साखी तक समाप्त हो गई है किन्तु १९१३ सम्बत्-
वाली प्रतिमें और भी अधिक है सो इस साखी के आगे से आरम्भ होकर अंततक है ।

इतना ही नहीं बहुत पुरानी प्रतियोंमें आदिमें "सेतुबन्ध में जायके, देखा हनुमत
वीर " से ही पुस्तक आरम्भ भी होती है किन्तु उस साखीके ऊपर की चौपाई नवीन
प्रतियोंमें पायी जाती है, और उससे कोई किसी प्रकारका बिगाड नहीं होता इस
कारण उसे भी लिख दिया है ।

अक्षर सो निःअक्षर है न्यारा । ओम ओंकार ताहि आधारार ॥
 तीनों गुणका जो बिस्तारा । रंकार है सब के पारा ॥
 ताके परे निःअक्षर धारा । सोई भेद निज आहि हमारा ॥
 ये सब हैं समरथ आधारार । समरथ शक्ति को वार न पारा ॥
 ताकी आश करे जो कोई । उतरें पार भौसागर सोई ॥

हनुमत कहे साहिब सुनो, तुम हौ दीन दयाल ॥
 तुम समान रघुपति नहीं, काटचो यमको जाल ॥

कबीर वचन—चौपाई ।

कहै कबीर सुनो धर्मदासा । वही ज्ञान मैं तुम्हें प्रकाशा ॥
 हनुमत अंश पुरुष का होई । तब हम उनको मिलिया सोई ॥
 हनुमत बोधि चले हम जबहीं । चतुर्भुज के ढिग पहुँचे तबहीं ॥
 उनसे कीना ज्ञान विचारार । वह हंसनका है सरदारार ॥
 चतुर्भुजको हम दियो गुरु आई । ताहि बनायो दर्भंगा राई ॥
 जो कोई तुम्हारा वीरा पावे । सो हंसा सतलोक सिधावे ॥
 इतनी कहिके हम काशी आये । चलत चलत कछुवारनहिं लाये ॥
 काशी विद्या गुरु बहुतोई । पण्डित ज्ञानी बहुते होई ॥
 धर्मदास तुम वंश हमारा । तुम्हरे काज हम यहाँ पगु धारा ॥
 तुम्हरे हाथ पान जो पावे । बहुरि न योनी संकट आवे ॥
 साखी—कहे कबीर धर्मदास सों, हनुमत बोध्यो जाय ।

पान परवाना देइके, तुमको मिलिया आय ॥

धर्मदास वन्दन करे, धनधन हो सत्यकबीर ।

हनुमतको दर्शन दियो, धन है हनुमत बीर ॥

छन्द—धन्य साहिब धन्य हौ तुम दर्शन दीनो आइके ।

कीजे दया अब दासपै जाऊँ चरण लागु धाइके ॥

वीर हनुमान बोधि के ले दिया पान प्रसादहो ॥
 शेष शारद विष्णु नारद नाहि न पावें आदि हो ॥
 सोरठा-नाहि न पावे आदि, शिव ब्रह्मा अरु नारद ।
 तुम्हरो वदन निहारि, धर्मदास वन्दन करे ॥
 इति श्रीबोधसागरान्तर्गतकवीरधर्मदाससंवादे
 हनुमानबोधवर्णनो नाम सप्तमस्तरंगः ।

सारविचारपचीसी ।

साखी-ब्रह्मादि सनकादिलै, मुनिवर आदि प्रयन्त ॥
 विन गुरु मोह निशा शयन, सुख सपने न लहन्त ॥ १ ॥
 गुरुके गुण गावे सभी, सत्य सही विनु लक्ष ॥
 मायाके उपदेश अज, हरिहर कालके भक्ष ॥ २ ॥
 कर्म धर्म मति तीन लै, अज हरिहर समुदाय ॥
 गावहिं ध्यावहिं ताहि कह, जेहि सब जीव नशाय ॥ ३ ॥
 कहने को चूके नहीं, जेती जिसकी दौर ॥
 सबै शब्द सहिदान है, परख शब्द सो ठौर ॥ ४ ॥
 वही प्रमाण सबन मिलि कीन्हा, ज्यों अंधरे की हाथी ॥
 आदि बाप कौ मरन जानै, पूत होत नहिं साखी ॥ ५ ॥
 अंधरे को हाथी सांच है, साचे हैं सगरे ॥
 हाथन की टोई कहें, आंखिन के अंधरे ॥ ६ ॥
 शब्दातीत शब्द ते पाइन, बूझे विरला कोइ ॥
 कहैं कवीर सतगुरु की सैना, आप मिटै तब ओइ ॥ ७ ॥
 जीव दुखी चाहे छुटन, चीन्हे नाहीं काल ॥
 आसा देवे निवृत्ति का, भोरे भवके जाल ॥ ८ ॥

तामस केरे तीन गुण, भौर लेइ तहँ वास ॥
 एकै डारी तीन फल, भाँटा ऊख कपास ॥ ९ ॥
 जीव फँसे तेहि जाल में, सूझे वार न पार ॥
 त्राहि त्राहि निशिदिन करे, साहब लेहु उबार ॥ १० ॥
 साहब को जाने नहीं, हाकिम चोर प्रचण्ड ॥
 यह ठाकुर यम देशमें, खण्डपिण्ड ब्रह्मण्ड ॥ ११ ॥
 नित उपजे नित खपे, निश्चय नष्ट सो मूल ॥
 परखहु काल कला सबै, देखि जगत मत भूल ॥ १२ ॥
 झिलमिल झगरा झूलते, बाकी छुटी न काहु ॥
 गोरख अटके काल पुर, कौन कहावे साहु ॥ १३ ॥
 विनु पारख वाणी सुने, धावे ताके साथ ॥
 घायल अनेकन भावसो, तजहिं न पीटहिं माथ ॥ १४ ॥
 बहु कर्महिं अरुझाइ जिव, डोरी अपने हाथ ॥
 नाच नचावे यम सदा, कारण कारज साथ ॥ १५ ॥
 चाहहिं जो निस्तरन को, इन कर्मन छुटकाय ॥
 तेहि तिहुँ फाँस लै धावहीं, बंदी देहि दृढाय ॥ १६ ॥
 करम कमाई सबन पर, राज दाम परमान ॥
 जन्मत मरत न छोड़ई, विविधि कर्म की खान ॥ १७ ॥
 बन्दी खाना जो पडे, जेहि राजा खुशियाल ॥
 लोभ गरासे जीव को, सुझे नहीं भवजाल ॥ १८ ॥
 जहर जमी दै रोपिया, अमी सींचै सौबार ॥
 कवीर खुलुक ना तजै, जामें जौन विचार ॥ १९ ॥
 इन्ह आखिन पथरा दिये, समझ दिये भ्रमजाल ॥
 क्षण क्षण जीवन जीवके, भोगे काल कराल ॥ २० ॥

मूस बिलाई एक सँग, कहु कैसे रहिजाय ॥
 अचरज यक देखो संतो, हसती सिंहहि खाय ॥ २१ ॥
 पूरण पिण्ड ब्रह्माण्ड सो, त्रिगुण फांस लगाय ॥
 नाशक नाशे जीवको, आपे आप कहाय ॥ २२ ॥
 बन्दी छोड छुडावई, मेटि मेटि यम-फांस ॥
 धन्य धन्य सो जीव हैं, तजहिं महा भोगांस ॥ २३ ॥
 प्रभु शरणागति परख दृढ, सत्य लोक परमान ॥
 संसत जीव विलास है, टूटा काल गुमान ॥ २४ ॥
 पारख सीढी झांकिके, उलटि बहै भवधार ॥
 थाह न पावहिं बूडहीं, हो ताके निस्तार ॥ २५ ॥

इति ।



इति
श्रीबोधसागरान्तर्गत
ग्रन्थ हनुमानबोध
समाप्त ।



भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित ।

श्री-लक्ष्मणबोध ।



खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष-"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम-प्रेस,

बम्बई.

संवत् १९९३ शके १८५८.

सत्य नाम ।



श्री० कबीर साहिब ।



श्रीमुनीन्द्राय नमः ।

अष्टमस्तरंगः ।

ग्रन्थ लक्ष्मणबोध ।

मंगलाचरण-दोहा ।

जय मुकुत जय मुनीन्द्र प्रभु, जय करुणामय ईश ॥

जय कबीर कलि दुख हरण, सदा नवाऊँ शीश ॥

उत्थानिका (धर्मदास वचन) ।

दोहा-विनय करत धर्मदास हैं, दोऊ कर को जोर ॥

लक्ष्मण बोध्यो काहि विधि, कहहु सो बन्दीछोर ॥

सत्य कबीर वचन ।

प्रथम सो सत्यनाम गुण गाऊँ । भक्त हेतु संसारहि आऊँ ॥
अनन्त बार आयो संसारा । देख्यो जमीं खलक मंझारा ॥
साधु संत देखों सब ठाऊँ । कतहुँ न देखों मुक्त का नाऊँ ॥
झुण्ड झुण्ड बहु देखों विरागी । कथहिं ज्ञान अल्पै बुधिलागी ॥
तत्त्व शब्द सुने नहिं काऊ । कतहुँ न सुनी परे वहि गाऊ ॥
एक दिन चले द्वारका भाई । देह तजी जहां त्रिभुवनराई ॥
गढ रोके बलभद्र रहाये । बहुत चिंता तिन मन उपजाये ॥
कृष्ण देह नहिं दाग लगायी । तब सपने कृष्ण बात जनायी ॥

बलभद्र सो कहा समझायी । अगली बात सब दर्ई बुझायी ॥
बलभद्र तुम भक्त हमारा । तुमसे कहूँ मैं सत व्यवहारा ॥
हमरी सीख मानिकर लीजै । जो हम कहैं सोई अब कीजै ॥

बलभद्र वचन ।

कहै बलभद्र तुम साहब मेरा । हमतो जनम जनम का चेरा ॥
जो तुम कहो सोई मैं करिहों । मानि सिखापन शिर पर धरिहों ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

जैसे कांचली सर्प तजाई । कांचलि रहे सर्प नहिं भाई ॥
याते तनको देहु जलायी । याहिराखी कछु फल नहिं आयी ॥
ठाट दहन तब तहवां भयऊ । जरत ठाट फेफरा रहेऊ ॥
तब बोले अस गोविन्द राई । पेई एक तुम बेगि बनाई ॥
मट्टी धरो पेइके माई । सो पेई तुम देहु बहाई ॥
पेई सोइ उडीसा जायी । बौद्धावतार की मांड मडायी ॥
ठाकुर कहा सो बलभद्र कीना । एक पेई बनाय कर लीना ॥
ता पेई पर हीरा जड़िया । सो माटी पेई में धरिया ॥
समुद्र माहिं दइ पेइ बहाई । सो पेई वहत उडीसा जाई ॥
तब राजा को सपना भयऊ । सपना में तेहि बात यक कहैऊ ॥

कृष्ण वचन ।

राजा सीख हमारी लीजै । बुद्धावतार कि थापन कीजै ॥

राजा वचन ।

राजा कहै कौन हौ भाई । सो मोहि बात कहो समुझाई ।

श्रीकृष्ण वचन ।

तब बोले सो गोविन्द राई । हम तो कृष्ण अहैं रे भाई ॥
द्वापर बाचा सम्पूरण भयऊ । ताते ठाट हमहुँ तजि दयऊ ॥

अब कलियुग बैठेगा सोई । बौद्ध थापना हमरो होई ॥
जगन्नाथ मम नाम है सोई । हमरी थापना यहि विधि होई ॥

सत्यकवीर वचन ।

राजा जब स्नान को गयऊ । पेई गडी रेत में पयऊ ॥
तब राजा परिकरमा दीना । पेई उठाय कै शिर पर लीना ॥
तुरतहि राज महल ले आवा । तबहि रानि कहँ तुरत बतावा ॥
करै निछावर मंगल गावै । घर घर नगर में बाजु बधावै ॥
राजा ब्राह्मण लीन बुलायी । सपने की सब बात सुनाई ॥

ब्राह्मण वचन ।

ब्राह्मण कहै सुनो महाराजा । सुफल जनम सरिहैं सब काजा ॥
शुभ नक्षत्र वार धरि लीजै । तब देवल की थापना कीजै ॥
रोहिणी नक्षत्र वार बुध लीना । तब देवल की नींव जो दीना ॥
जब देवल सम्पूरण भयऊ । तबही राजा जग मंडयऊ ॥

पुरातन वार्ता ।

मंथन उदधि विष्णु जब कीन्हा । निकसी वस्तु बांटी सो लीना ॥
और त्रैता में बांध बँधाये । ताको बैर उदधि मन लाये ॥

उदधि विचार ।

तबका बैर अबहीं मैं लेऊँ । देवल गाडि रेतमें देऊँ ॥

सत्य कवीर वचन ।

लगन मुहूरत पहुँचे आयी । तबही देवल गाडि के जायी ॥
छैबार देवल गाड्यो भायी । तब हम हतो जगत के माही ॥
पूर्विल कौल सुरति धरि लीना । जाय आसन समुद्र पर कीना ॥
उदधि साजि दल जबही आवा । तब हम डाट समुद्र बतावा ॥
तब हंकार समुद्र बतावा । महा क्रोध करि हम पै आवा ॥
तब करि क्रोध समुद्र ललकारा । महाफटकार समुद्र फटकारा ॥

तबही पृथ्वी फाटि सो गयऊ । धसी समुद्र पतालै गयऊ ॥
 तबही खबर लक्ष्मी पाई । बैठा साधु समुद्र के ठाई ॥
 तब लक्ष्मी आपे चलि आयी । तब हम शोभा कर्म बनायी ॥
 लक्ष्मी कीन दण्डवत आयी । धँसाइ समुद्र पताल पठाई ॥

लक्ष्मी वचन ।

तब लक्ष्मी संतन सो कहेऊ । महाप्रसाद तुम जगको लेऊ ॥

संत वचन ।

संत कहे सुनु लक्ष्मी आई । नेवता देहु कबीरहि जाई ॥

सत्यकवीर वचन ।

तबहीं लक्ष्मी हम पै आयी । आइके कहै हमहि गोहरायी ॥
 तबहीं संत कहैं सुनु माई । बैठे कबीरा परले ठाई ॥
 तब लक्ष्मीध्यानपुरुषकाकीना । करमी सभा मेटि सब दीना ॥

लक्ष्मी वचन ।

तबही हमसों बात जनायी । तुम करो प्रसाद जगतके मायी ॥

सत्यकवीर वचन ।

तब हम कहा बात समझायी । हम तौ प्रसाद पुरुषको पायी ॥

लक्ष्मी वचन ।

लक्ष्मी कहै तुम कौन हौ भाई । तुम कैसे गम पुरुषको पाई ॥

सत्यकवीर वचन ।

कहै कबीर सुनु लक्ष्मी आई । हम तो सेवें पुरुष को पाई ॥
 जिन साहिब तुमको कीन्हा । साहिब पति तुम तनको दीन्हा ॥
 तुम तो गरब भुलानी सोई । ताते काज सिद्ध नहिं होई ॥
 श्याम देह कीना तुम सोई । तब ते तुमरी मुक्ति न होई ॥

लक्ष्मी वचन ।

तब लक्ष्मी कहे समझायी । तुम कहो सो हम मानें भाई ॥

सत्यकवीर-वचन ।

बावन अटका जगन्नाथ चढायो । चार अटका समरथ अरपाओ ॥
तब हम न्योते तुमरे आवें । जब तुम सेवो पुरुषके पावें ॥
सुनत लक्ष्मी ठाकुरपहँ आयी । जो कुछ सुनीसुकहि समझायी ॥

लक्ष्मी वचन ।

भक्त कवीर नाम जो आहीं । सो तो बैठे समुद्र की ठाहीं ॥
जब उन डांट समुद्र बताया । तबहीं समुद्र पताल समाया ॥
तब हम न्योत कवीरहि दीना । तब कवीर हमसों छल कीना ॥
करमी सभा बनाय सोलीन्हा । तब हम ध्यान पुरुषका कीन्हा ॥
मिटिगयी सभा कवीरकरहेऊ । तब कबीर ऐसे पुनि कहेऊ ॥
जिन साहबने तुमको कीन्हा । काहे बिसार तुम उनको दीन्हा ॥
तुम तो गर्व भुलाने सोई । ताते कार्य्य सधन नहिं होई ॥
छप्पन अटका जगन्नाथ चढाये । सत समरथ को धरे बिसराये ॥
कहा कहूँ प्रसाद तुम्हारा । हमको समरथ देवन हारा ॥
हम बिन्ती सतगुरु सों कीन्हा । तब सतगुरु सिखावन दीन्हा ॥
बावन अटका जगन्नाथ चढाओ । चार अटकासमरथको अरपाओ ॥
तब हम न्योते तुम्हरे आवें । हम तो अंश पुरुष के भावें ॥
उनकी गति मति लखी न जायी । तुम त्रिगुण होय सृष्टि बनायी ॥
हम सतगुरु होय जिव मुकतावें । हम तो सेवें पुरुष के पावें ॥
तुम त्रिगुण का राज कराई । तब बोले गोविन्दे राई ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

ज्योति अंश से हमरी उत्पानी । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर जानी ॥

लक्ष्मीवचन ।

तब लक्ष्मी कहै समुझायी । वह तो ज्योति हमारी आई ॥
तुमको तो हम उत्पन कीन्हा । चारि स्वरूप हमहिं रचि दीन्हा ॥
त्रिगुण स्वरूप जो सृष्टि बनायी । चौथे अंश ज्योति थपायी ॥

सत्यकवीर-वचन ।

तब ठाकुर मन चक्रित भयऊ । सुनत बात गरव गलि गयऊ ॥
 तब गोविन्द आपुचलि आये । तब कवीर उठि मिले जो धाये ॥
 लक्ष्मी गोविन्द कवीर बैठाये । तब गोविन्द यक बात सुनाये ॥

गोविन्द वचन ।

हमतोगतिमति तुमरि न पाई । हमको लक्ष्मी अब समझायी ॥
 साखी-जो तुम अंश पुरुष के, सतगुरु हौ तुम सोउ ।
 देवल गाडे रेत में, ताहि वन्द करि लेउ ॥

चौपाई ।

जबहिं उदधिदल सजिकेआया । तबहिं कवीर पुकार जनाया ॥
 धँसि समुद्र पातालै गयऊ । देखत गोविन्द चक्रित भयऊ ॥
 तब विन्ती सतगुरुसों कीन्हा । दोयकर जोरि लक्ष्मी आधीना ॥
 चलो कवीर यज्ञमें पग धारो । तुमते शोभा रही हमारो ॥

सत्यकवीर वचन ।

छप्पन भोग चढाओ जाई । सत्य समरथ को भोग लगाई ॥
 तब तुम हमको देखो जाओ । अरध प्रसाद रखा जब पाओ ॥
 तब गोविन्द स्थान उठिआये । जाइ उपदेश राजहि सुनाये ॥
 छप्पन भोग चढाओ जायी । सत्य समरथ को भोग लगायी ॥
 राजा पंडा कहै बुझाई । छप्पन भोग चढावहु जाई ॥
 सो समरथ को भोग लगायी । तब तुम पावो प्रसाद अघायी ॥
 आध प्रसाद ऋषी जब पाई । तब तुम हमको दिखाओ भाई ॥
 हारि समुद्र तब ब्राह्मण भयऊ । हाथ जोरिके ठाढे रहऊ ॥

समुद्र वचन ।

कौन हौ भाइ कहां ते आये । वस्ती छोडि यहाँ कसबैठाये ॥
 यहां तो लहर समुद्रकि आई । जाओ यज्ञमें भोजन पाई ॥

सत्यकवीर वचन ।

तबहि कवीर कहे समुझायी । तुम समुद्र कस वरण छिपायी ॥

समुद्र वचन ।

तब समुद्र अस वचन सुनाई । कहा है नाम तुम्हारो भाई ॥

सत्यकवीर वचन ।

हम तो अंश पुरुष सरदारा । भक्त कवीर है नाम हमारा ॥

समुद्र वचन ।

तब समुद्र बोले ऐसी बानी । हमतो हार तुमहिं से मानी ॥

हमरो मंथन जब इन कीया । बड़ दुख तब इन हमको दीया ॥

और त्रेता में पैज बँधाई । तबका वैर हमको साले भाई ॥

तुम तो हो सतगुरु होहु सहाई । तुमते हमार कछू न बसाई ॥

सत्यकवीर वचन ।

तब समुद्र को हम समझायी । निर्धन को चोर कहा लै जायी ॥

सब जग साख तुम्हारी देई । तुम दाता हम भिक्षुक होई ॥

इतनी दया तुम हमपर कीजो । बोली करी कथा सुनि लीजो ॥

इनको टहल शीश जो दीना । तापर दुष्ट दगा जो कीना ॥

त्रिया हरण इनकी जो भयऊ । जब इन बनहि बसेरा लियऊ ॥

राम लक्ष्मण हनुमान मिलायी । तब तिन मति असकीनबनायी ॥

सागरबाँधनका मता जो कीना । मच्छरूप तुमही धरि लीना ॥

तब तुम लागि उनके ठगिरहेऊ । करि विश्वास बहुतै दुख सहेऊ ॥

यह अपने मन गरब भुलाना । हमरे नाम सो शिला तराना ॥

राम नाम जब अंक चढावा । धरे पैर जब लीन चुवावा ॥

देखत राम तब चक्रित भयऊ । तबही शीश धूनि कर रहेऊ ॥

अतिही शोच करे बल वीरा । शीश डुलावे सागर तीरा ॥

जलमें जंतु देख्यो बड भारी । यह तो झूठी पैज हमारी ॥

तेहि अतिदुःखित जब हम देखा । तब हम पृथ्वी ओर अवरैखा ॥
 चहुँ फेर बना कंचन का कोटा । ता बिच बैठा रावन खोटा ॥
 लक्ष्मण इन्द्रीजीत कहावैं । हम चेतावन ताको जावैं ॥
 प्रथमै हम रावण गढ गयऊ । तब हम तपसी वेष धरयऊ ॥
 जब हम रावन सों बात जनाई । वह काढे खडग हम पर भाई ॥
 तब हम आडा तृण जो दीना । घाव अठारह तृण पर कीना ॥
 कटे न तृण खिसियाना भयऊ । जाय घाव खम्भपर कियऊ ॥
 कटि गया खम्भ भया दो भागा । सो मंदोदरि दृष्टिहि लागा ॥
 तृण के ओट सो सृष्टि का करता । जग देखत ही भूले समता ॥
 कहै मंदोदरि गहि ता पाई । गरब न छाडे रावन राई ॥
 तब हम चले ताहि वन गयऊ । लक्ष्मण राम दोऊ जहँ रहेऊ ॥
 देखत लक्ष्मण धायके आया । आवतही अस वचन सुनाया ॥

लक्ष्मण वचन ।

कहे लक्ष्मण सुनो ऋषिराई । पिता हुकुम मेटो नहिं जाई ॥
 भरत दे राज राम बन अयऊ । तापर दुष्ट दगा जो कियऊ ॥
 सीता हरी रावन तेहि ठाऊँ । मैं तो शरण तुम्हारे आऊँ ॥

सत्यकवीर वचन ।

लक्ष्मण देखि भयी मोहि दाया । अर्चित नाम हम ताहि सुनाया ॥
 अर्चित नाम का किया विवेका । गिरिपर लिखी सत्यकी रेखा ॥
 काष्ठ समान सो गिरिवर तारी । उतरी सेना सकल भयि पारी ॥
 तबही राम लक्ष्मण फरमावा । हमको मुन्दरी आनि चढावा ॥

मुनीन्द्र वचन ।

तब कहैं मुनीन्द्र सुनो रघुराई । मुन्दरी धरो कमण्डलमाई ॥
 तबहि रामजी आय सिधाये । मुन्दरी डारि ऋषी पै आये ॥
 तब मुनीन्द्र यह बात सुनाई । लाओ मुद्रिका दिखाओ भाई ॥
 देखि कमण्डल चकृत भये भाई । सोचे राम अपने मनमाई ॥

रामचन्द्र वचन ।

अकथ कथा कही नहिं जायी । कहो ऋषिराय बात समझायी ॥
तुम तो धोखा बहुत उपजाये । ऐसी मुँदरी कहां तुम पाये ॥
सोई बात कहो समझायी । जाते संशय जीका जायी ॥

मुनीन्द्र वचन ।

मुनीन्द्र बोले राम चित धरिया । एति बार तुम सृष्टि औतरिया ॥
जिते आकाश में तारा ठयऊ । उते लंका में रावण भयऊ ॥
साखी-नगर अयोध्या राय तुम, भये अनेकहिं वार ।

अपनी आदि भुलाइया, तुम कैसे करतार ॥

रामचन्द्र वचन-चौपाई ।

रामचन्द्र कहे सुनो ऋषिराई । तुमरी गति मति कही न जाई ॥
अजहुँ शिखापन हमको दीजै । जाते काज सिद्ध करि लीजै ॥
काष्ठ समान गिरिपर्वत भारी । सेना उतरि सकल भइ पारी ॥

सत्यकवीर वचन ।

पुरुषोत्तम परतीति बैठायी । ताते काज सिद्धि तब पायी ॥
जाउ समुद्र तुम अपने ठाई । यहि गुनाह मोहि बखशो भाई ॥
तुम दाता हम भिक्षुक तुम्हारे । तुमरी साख बडी संसारे ॥
तुम छीलर न होउ बक्शो भाई । हम तो जाते यज्ञके माही ॥
अब तुम जाहू अपने ठाई । कञ्चन द्वारिका लेहु बुडाई ॥
जगन्नाथ की महिमा होने दीजै । कञ्चन द्वारिका जलमें कीजै ॥
मानि वचन गयो अपने ठाई । या बिधि दीन समुद्र हलाई ॥
इतना कहि हम ठाकुरपर गयऊ । लक्ष्मी रु राय त्रिभुवन रहेऊ ॥
छप्पन भोग चढै है द्वारा । लागा भोग ठौरहीं ठौरा ॥
परोसै पण्डा बडी पकौरी । दाल भात और खीर मुंगौरी ॥
बहु अचार गिनो नहिं जायी । छप्पन भोग परोसे आयी ॥

ऋषी मुनी सब गरब भुलाये । तब हम एक कला दिखलाये ॥
 ऋषी मुनी प्रसाद जब करहीं । जित तित पण्डा परसत फिरहीं ॥
 जहाँ तहाँ हम ठाढ़ रहाये । आदर भाव कछू नहिं पाये ॥
 जब पण्डा कोई देखै मोही । तबहीं वचन कहै अस सोई ॥
 ऋषि मुनि जब प्रसाद करिलेई । ता पीछे तुमही धरि देई ॥
 तब हमही अस चरित दिखावा । कवीर हो गयो ठावहिं ठावा ॥
 पुरुष प्रताप अजर शरीरा । होय अन्तर बिच बैठु कवीरा ॥
 जित देखें तित दास कवीरा । भागे ऋषि समुद्र के तीरा ॥
 भागे पण्डा दूर से भाई । किय अस्नान समुद्रै जाई ॥
 जाय अस्नान समुद्रमें कीना । काय देखि तब भये मलीना ॥
 गलित कोढ़ सबहि न को भयऊ । जाय फिरियाद रायसोकियऊ ॥
 वहाँ तो देखा एक शरीरा । यहाँ तो देखा सकल कवीरा ॥
 ऐसा जादू चेटक कीना । सबका धर्म भ्रष्ट करि दीना ॥
 तब राजा छडीदार पठवायो । दास कवीर को बेगि बुलायो ॥
 करि सलाम छडीदार सिधाये । कवीर मिले द्वार के माये ॥
 आये कवीर राजाके ताई । तब राजा उठि टेके पाई ॥

राजा वचन ।

तबही राजा विन्ती कीना । हम तो सेवक सदा अधीना ॥
 करहु दया दरद है देही । ब्राह्मण दुख पावत है तेही ॥

मुनीन्द्र वचन ।

बडा अपराध उन ब्राह्मण कीन्हा । अन्नदेवको दूषण दीन्हा ॥
 अन्नदेव को रोष उपजी भाई । अन्नदेव मनावहु जाई ॥
 ऊंच नीच गनो मति कोई । तब काया कंचन सी होई ॥
 जगन्नाथ अयोनि अवतारा । उनका है सब सत्य व्यवहारा ॥
 अन्नका छूत करे जनि कोई । करे तो निश्चय कोटी होई ॥

किनका किनका चुनिचुनिखायी । तबहीं कोठ दूर होय जायी ॥
तब सब ब्राह्मण सो नाक घसायी । सबका कोठ तबै मिटि जायी ॥
जगन्नाथ का भाव तब भयऊ । राजा रानी मिलि सब गयऊ ॥
जब राजा को दर्शन भयऊ । जगन्नाथ यक बात जनयऊ ॥

जगन्नाथ वचन ।

मलयागिरि को काठ मँगाओ । ताकी मूरति बेगि बनाओ ॥
तब राजा जासूस पठाई । मलया गिरि को खोज करायी ॥
देखजासूस फिरि नगर मँझारा । आइ राजाको कीन जुहारा ॥

जासूस वचन ।

अहो राजा चन्दन है यक ठाई । लगे भुजंग देखे बहुताई ॥

तब राजा यह बुधि उपजाई । सेना साथै लयी सिधायी ॥
जहाँ चन्दनतहाँ काष्ठ जगकीना । ताके समक्ष अग्नि सो दीना ॥
भयी प्रचण्ड अग्नि तेहि ठाहीं । जरे सर्प तब अग्नि के माहीं ॥
काष्ठ चन्दन जबहीं ले आये । तब कारीगर तुरत बुलाये ॥

राजा वचन ।

बौद्ध औतारकी मूर्ति गढि देहू । हमसे गाम परगना लेहू ॥

कारीगर वचन ।

तब कारीगर बात जनावे । राजा सुनो बनै नहि आवे ॥
देखी मूरति सब कोइ गढई । अनदेखा काम कैसे बनई ॥
देवल काज हम चूक पराई । तो हम जरामूल से जाई ॥

१ पुरानी प्रति में इस चौपाई के आगे नीचे लिखे वचन नहीं हैं, किन्तु नवीन प्रतियों-
में हैं । किन्तु यह नवीन प्रतिका वचन कबीरपंथ के दोहा ग्रन्थों से भी नहीं मिलता ।

“जगन्नाथ योनि विन अवतारा । उनका है यह सत्य व्यवहारा ॥

उनकी भाक्ति करै जो कोई । ताकी काया कोठ न होई ॥

साखी-जगन्नाथ भात ले, हेत करी जो पाय । जो उनकी निन्दा करै, निश्चय नरकको जाय ॥”

सत्यकबीर वचन ।

ऐसी कहि अपने घर वह गयऊ । तब राजा मनमें सोचत भयऊ ॥
 जगन्नाथ की जो मूर्ति बनाई । गाम परगना तेहि देऊँ लिखायी ॥
 तब लक्ष्मी हमसे विन्ती कीना । यहि शोभा तुमही भल दीना ॥
 देखी मूरति सब कोइ गढि देई । अनदेखे सो कैसे करई ॥
 जो तुम हमसे टहल कराओ । यही काम करो तुम जाओ ॥
 हम पर भार जो सृष्टिका दीना । करो यह काम होहु ना भीना ॥
 हमको टहल सृष्टिका देहू । इतना कारज अपने शिर लेहू ॥
 लक्ष्मी विन्ती ऐसी लायी । नातो विरद तुम्हारी जायी ॥
 तब हम भेष सुतारका लीन्हा । बरस सौकी आयुर्दा कीन्हा ॥
 आये पौरि में ठाढ़ रहाये । पवरिया राजकहँ वचन सुनाये ॥
 राजा मैं तोहि देऊँ बधाई । कारीगर आया पौरके माई ॥
 कांधे बसुला बोले लौ लीना । हाले गर्दन बोले झीना ॥
 राजा मनमें भयो अनन्दा । जैसे चकोर पायो निशि चन्दा ॥
 राज प्रधान पौरीमें आयी । कारीगरसे अस कहे अर्थायी ॥
 जगन्नाथ की मूरति बनाओ । तौ तुम ग्राम परगना पावो ॥
 देवलमाहिं मूर्ति धरि दीजै । जो चाहो सो हमसे लीजै ॥

कारीगर वचन ।

हम तो गुरुमुख आहैं भाई । लोभ लालच नहिं हमरे ठाई ॥
 देवलकाज सिद्ध करि दैहों । लालच चित में नहीं करैहों ॥

सत्यकबीर वचन ।

इतना सुनि राजापहँ गयऊ । राजा सुनि मन हर्षित भयऊ ॥
 तबही राजा महलमों जायी । रानीसों सब बात जनायी ॥
 तब मुक्ताहलसो थार भरायी । कारीगर को लीन बुलायी ॥

कारीगर ।

राजा कहा हमारा कीजै । सोलहदिनकी अवधी दीजै ॥
हमको साज मूरति का देओ । देवलको द्वार मूँदि कर लेओ ॥
जबही साज देवल लै जाऊ । तबहीं द्वार मूँदि हो भाऊ ॥
तबही कह्यो मूँदि पौरहि दीजै । सब कोइ गमन यहाँ से कीजै ॥
सोलह दिनमें द्वार खुलै हो । तौं कछु विघ्न नहीं तुम पैहो ॥
देइ कपाट तब ताला दीना । चहुँ दिशि पण्डों चौकी कीना ॥
दिन दश सो बीति जब गयऊ । चलत फिरत गोरख तब अयऊ ॥

गोरख वचन ।

गोरख कहे दर्शन मोहि दीजै । नहिं तो शाप हमारो लीजै ॥

सत्यकवीर वचन ।

तब पण्डा राजा पहुँ जायी । राजा से सब बात सुनायी ॥
राजा पण्डा सों कहे बुझाई । कौन शाप गोरखकेर उठाई ॥
तब पंडा गोरख पै आये । हाथ जोरिके विन्ती लाये ॥
दिनछः हम तुमसों माँगे भाई । ता पाछे हम दरश कराई ॥

गोरख वचन ।

साखी-मैं गोरख प्रसिद्ध हूँ, हमरे आड जनि होहु ।

मोको दरश करावहु, कै शाप हमरो लेहु ॥

चौपाई ।

तब राजा गोरख पगु पडिया । बहु विन्ती भाव सों उच्चरिया ॥
जब गोरख नहिं माने राई । तब राजा अस कह्यो बुझायी ॥

१ इस चौपाईमें दश दिनके पश्चात् गोरखका आना बतलाया है किन्तु नवीन प्रतियोंमें सात ही दिन लिखा है ।

“दिना सात बीते पुनि जाई । फिरत फिरत गोरख पुनि आई॥”

नवीन प्रतियोंमें सब ऐसे ही बेनुकी वाणीका ऐसा गडबड हुआ है कि सब यहांपर लिखना असम्भव है ।

तब राजा कहे सुन गोरख आयी । जैसा तुम करिहो तैसा पायी ॥
 नहिं माना गोरख द्वार उघारा । तब सतगुरु एक कला परचारा ॥
 भागा गोरख दूर ते भाई । सतगुरु शरण सो बैठा जाई ॥
 जगन्नाथ कहे सुन गोरख आयी । योगी हमरो दरश न पाई ॥
 यहि औगुन गोरख से भयऊ । ताते योगी दरश न पयऊ ॥
 जगन्नाथ राजा सो कहेऊ । अवधिपूर नाहीं सो भयऊ ॥
 ताते हाथ ठूठ रहि जायी । दिन सोलह बीते नहिं पायी ॥
 देह सम्पूर्ण होन न पायी । झगरू पण्डहिं को समझायी ॥
 झगरू पण्डा शिष्यभयो आयी । केतिक दिन ऐसे बिति जायी ॥
 तब जगन्नाथ सो भेंट करायी । जगन्नाथ कह सुनो जी आयी ॥
 तुम्हरी हमरी भली बनि आयी । तब हम तेहि कहा समुझाई ॥
 कहैं कवीर सुनो त्रिभुवन राई । सिंघल द्वीप हम देखन जाई ॥
 साखी-सिंघल द्वीप हम जावहीं । जगन्नाथ चित लाउ ॥

समुन्दर का भय मेटिके, अटल राज कराउ ॥

इति श्रीबोधसागरे कवीरधर्मदाससम्वादे जगन्नाथ-
 स्थापनवर्णनो नाम सप्तमस्तरंगः ।

इति ग्रन्थ लक्ष्मणबोध ।

संक्षेप सार ।

और

ग्रन्थपर सधारण दृष्टि ।

यद्यपि इस ग्रन्थमें लक्ष्मणजीकोभी बोध करनेकेभी प्रसंग-
 से थोड़ी चर्चा आगयी है किन्तु प्रधानतः इस ग्रन्थमें वर्णन
 जगन्नाथजी की स्थापनाका है । इस जगन्नाथकी स्थापनाके
 विषयमें भी अनेक ग्रन्थोंमें बहुत मतभेद हैं इस कारण और २
 ग्रन्थोंकाभी इस विषयमें वर्णन थोडासा लिख देता हूँ ।

जब श्रीकृष्णजीका स्वधाम गमन हुआ तब बौद्धावतार हुआ । और जब जगन्नाथजीका अवतार हुआ उस समय उड़ीसा देशका राजा इन्द्रदमन था । उस राजा इन्द्रदमनको कृष्णजीने स्वप्न दिखलाया कि तू मेरा मन्दिर उठा । जगन्नाथजीकी आज्ञानुसार राजा मन्दिर बनाने लगा, जब मन्दिर तैयार होगया तब समुद्र आया और मन्दिरको ढहाकर लेगया और भूमि बराबर कर गया । इसके उपरान्त फिर राजाने मन्दिर बनवाना आरंभ किया फिर उसकी वही दशा हुई । फिर बनवाया फिर वही दशा होगयी । इसप्रकार कई बेर राजाने मन्दिर बनवानेकी इच्छा की पर समुद्रने उसको तैयार होने नहीं दिया तब राजाने दुःखी होकर उस इमारतका बनवाना ही छोड़ दिया । इस समय कबीर साहबने अपने वचनका स्मरण किया जैसा कि निरञ्जनगोष्टि आदि ग्रन्थोंमें लिखा है कि, निरञ्जनने कबीर साहबसे निवेदन किया था कि जब मेरा जगन्नाथका अवतार होगा तब समुद्र मेरे मन्दिरको तोड़ेगा, उससमय आप कृपा करके समुद्रको हटादेवें और मेरे मंदिरको स्थापित करादेवें तब आप वचनबद्ध हुए थे कि, मैं तुम्हारा मन्दिर स्थापित करा दूंगा और समुद्रको हटादूंगा । उसी वचनके अनुसार कबीर साहब उड़ीसा देशमें आन उतरे और राजा इन्द्रदमनके पास जाकर बोले, कि हे राजा ! तुम जगन्नाथके मन्दिरको बनाओ तब राजाने निवेदन किया कि, महाराज समुद्र मंदिरको बनाने नहीं देता मेरा कुछ वश नहीं चलता, जब मैं बनाता हूँ तब वह आकर ढहा जाता है मैं क्या करूँ ? कबीर साहबने कहा कि राजा ! मैं इसी प्रयोजनसे आया हूँ अब प्रसन्नतापूर्वक ठाकुर-

द्वारा बनवाओ मैं समुद्रको हटा दूंगा अब उसका कुछ वश नहीं चलेगा. तब राजाने पुनः मन्दिरको बनावाना आरम्भ किया और मंदिर बनने लगा, कबीर साहब समुद्र तटपर गये और एक चबूतरा बनाकर उसपर समुद्रकी ओर मुँह करके बैठ गये । उधर ठाकुरका मंदिर बनकर तैयार होनेके समीप आ गया और समुद्र-ने देखा कि अब तो ठाकुरका मन्दिर बन गया तब बड़े वेगसे दौड़ा और लहरें आकाशको उठीं । जब वह लहरें मारता कबीरके चौराके समीप पहुँचा तब सामने कबीर साहबको बैठे देखा देखते ही समुद्र ठहर गया और आगेको चरण बढा नहीं सका और ब्राह्मणका स्वरूप धरकर कबीर साहिबके पास आया और दंडवत प्रणाम करके निवेदन किया कि, हे महाराज ! मैं तो जगन्नाथके धोखेसे आया और मंदिर ढहाना चाहा । अब तो सामने आप बैठे हैं अब मुझमें यह सामर्थ्य नहीं है कि आगेको चरण बढा सकूँ, आप न्यायकर्ता हैं मेरा बदला दिलाओ । तब कबीर साहिबने कहा कि हे समुद्र ! मैं तुम्हारा बदला जानता हूँ पर अब इस कलिकालमें जगन्नाथजीका माहात्म्य होगा तथा उनकी पूजा होवेगी इस कारण अब तुम ठाकुरका मंदिर उठनेदो और किसी प्रकारकी बाधा उपस्थित मत करो, मैं तुमको इस मन्दिरके बदले द्वारकापुरी देता हूँ तुम जाकर उसको डुबालो । तब समुद्र प्रसन्नतापूर्वक वहांसे पीछे पलटा और द्वारकापुरीको डुबालिया और उधर जगन्नाथजीका मन्दिर बनकर पूरा हो चुका. समुद्रके हरिमन्दिर तोड़नेका कारण यह था कि जब रामचन्द्र का अवतार हुआ था उस समय श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रपर बला-त्कार किया था और सेतुबंधपुल बांधकर पार उतरे थे किन्तु समुद्र

रामअवतारमें और कृष्णावतारमें भी बदला ले नहीं सका पर जगन्नाथके अवतारमें अपना बदला लेने के निमित्त उद्यत हुआ और उसके बदले द्वारकापुरीको डुबा दिया । इससे यह सिद्ध होता है कि कियेका बदला अवश्य भोगना पड़ता है । इस प्रकार जब ठाकुरका मन्दिर बनकर भली भाँति प्रस्तुत होगया तब कृष्णजीने अपने पण्डाको स्वप्न दिखलाया कि हे पण्डे ! कवीर साहिबने मेरा मन्दिर स्थापित कर दिया अब तुम लोग आकर मेरी पूजा करो । जब जगन्नाथजीने ऐसा स्वप्न दिखलाया तब पण्डा घरसे चलकर पहिले समुद्रतटपर आया और कबीरचौरे पर गया वहाँ कबीर साहबको बैठे देखा । उस समय सत्य गुरुका वेष जिन्दा साधुका था और वैष्णववेष नहीं था । इस कारण वह वेष देखकर उस ब्राह्मणने अपने मनमें अनुमान किया कि प्रथम मैंने अशुभ दर्शन किया ठाकुरका दर्शन नहीं किया, ऐसा अनुमान करके वह पण्डा ठाकुरके मन्दिर में पहुँचा, तब कवीर साहिबने उसके मनकी समस्त बातें जान लीं और ऐसा कौतुक दिखलाया कि जब वह पण्डा ठाकुरके मण्डपमें आया तब उसको विचित्र कौतुक दिखलाई दिया कि ठाकुरका समस्त मन्दिर कवीर साहिबकी मूर्तियोंसे भरा हुआ है । जिस ओरको वह ब्राह्मण देखता है उधर वह कवीर साहबकी मूर्तिको उपस्थित पाता है और ठाकुरकी मूर्ति कहीं दिखाई नहीं देती, तब वह ब्राह्मण अक्षत और पुष्प लिये चकित होकर खड़ा रह गया कि मैं किसकी पूजा करूँ । ठाकुर तो कहीं दिखाई नहीं देते । समस्त मन्दिर कवीर साहिबकी मूर्तिसे भरा हुआ है । तब वह अपने मनमें सोचने लगा

कि इसका क्या कारण है और फिरसे भोजनके समयमें भी कबीर साहबने सर्वत्र दर्शन दिया जैसा इस ग्रन्थ लक्ष्मणबोधमें वर्णन है । अन्तमें उसने अपने दोषको जान लिया कि मैंने जो कबीर साहब को म्लेच्छ समझा था इसकारण ही मुझको यह दंड मिला है, और मुझको यह कौतुक दिखलाया । यह शोच समझकर वह ब्राह्मण कबीर साहबकी स्तुति और दोषके निमित्त क्षमा प्रार्थना करने लगा । जब इस पण्डाने सत्यगुरुकी बहुत प्रार्थना और स्तुति की और अत्यंत नम्रतापूर्वक अपने दोषोंके निमित्त क्षमा प्रार्थना की तब आप दयालु हुए और अपनी सब मूर्तियोंको समेट लिया केवल एक मूर्ति रह गई और ठाकुरकी मूर्ति दिखाई देने लगी । तब कबीर साहबने उस ब्राह्मणसे कहा कि हे पण्डा ! अब तुम ठाकुरको पूजो पर इस बातका ध्यान रखना कि आजके दिनसे इस जगन्नाथपुरीमें छूत न रहेगी और जाति पाँतिका ध्यान तनिक भी न रहेगा । प्रत्येक जाति एक दूसरे जातिके साथ निधड़क भोजन करेगी । अबलों पुरुषोत्तमपुरीमें वही नियम प्रचलित है । सब जातिके लोग एकही स्थानपर भोजन करते हैं कोई किसीके जूठका कुछभी ध्यान नहीं करता ।

इस ग्रंथकी भी कई प्रतियां मेरे पास उपस्थित हैं, कोई प्रति भी किसीके साथ मिलती नहीं है । सब प्रतियोंमें प्रसंगका तो ऐसा उलट पुलट है कि, कहीं किसीका पता नहीं मिलता और कविताकी तो यह दशा है कि, चौपाईके किसी चरणमें २२ मात्रा हैं और किसीमें १४ । और लिखायी की जो बात है उसको कहनेकी आवश्यकता ही नहीं है, इसकारणसे यह

पुस्तक सबसे पुरानी प्रति जो १८६० संवत् की लिखी हुई है उसके अनुसार रक्खा है । हाँ, नवीन प्रतियोंमेंसे भी प्रसंगानुसार जो उपयुक्त जान पडा है वह भी इसमें रक्खा है किन्तु सो बहुत कम ।

इति लक्ष्मणबोधः सम्पूर्णः ।



पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास,
“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम्-प्रेस,
बम्बई.

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
“ लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम्-प्रेस,
कल्याण—बम्बई.

इति
श्रीबोधसागरान्तर्गत
ग्रन्थ लक्ष्मणबोध
समाप्त ।

